अंशावतार आदि अग्र

(काव्याञ्जली)

ओमप्रकाश गर्ग 'मधुप'

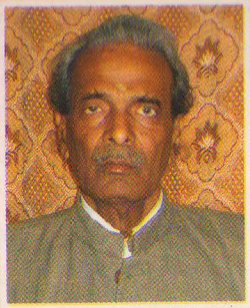

लेखक: ओम प्रकाश गर्ग 'मधुप'

जन्म : श्रावण शुक्ला सप्तमी सम्वत् 1996
अध्ययन : हायर सेकेण्डरी
लेखन: हिन्दी व राजस्थानी दोनों भाषाओं में गद्य – पद्य समान रूप से

रचनाएं : शूर्पणखा, पिरथी पूत, बोल चिड़कली, सांसां रा सूतर, ओळू री ओळ्यां, उणियारो, गज़लॉ रौ गोरबन्द, कुबद कुण्डली, चूङ्गट्या, श्री गुरु शरणम्, अनभै उकल्या आखर, गऊ जस कीरत (काव्य), श्री विष्णु अग्रसेन, जग की रीत, दहेज (नाटक) एक ईट एक रुपया (कहानी संग्रह) अग्रवंशकर्तार का युग(इतिहास शोध), अंशावतार आदि अग्र (काव्य), श्री विष्णु अग्रसेन अवतारी (काव्य) स्तरीय पत्र पत्रिकाओं, आकाशवाणी आदि से रचनाओं का निरन्तर प्रकाशन एवं प्रसारण

सम्मान : रंग भारती राष्ट्र स्तरीय काव्य प्रतियोगिता में सम्मानित, कजरारी (हिन्दी त्रेमासिक) 314/25 त्रिनगर, दिल्ली द्वारा कहानी लेखन हेतु सम्मानित

संस्थाएं : राजस्थान साहित्य अकादमी, राजस्थानी भाषा साहित्य संस्कृति अकादमी की कई समितियों में भागीदारी, विश्व हिन्दू परिषद् (जिलाध्यक्ष), भारत विकास परिषद् (अध्यक्ष), श्री गोपाल गौशाला (आजीवन ट्रस्टी), पश्चिमी राजस्थान अग्रवाल सम्मेलन(कार्यकारिणी सदस्य), जिला अग्रवाल सम्मेलन(जिला मंत्री), गोसेवा आयोग, अग्रवाल समाज बाड़मेर, अन्तर प्रा न्तीय कुमार साहित्य परिषद् (परामर्शदाता) इत्यादि अनेक सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक, संस्थाओं से सक्रिय जुड़ाव।

अंशावतार आदि अग्र

काव्याञ्जली

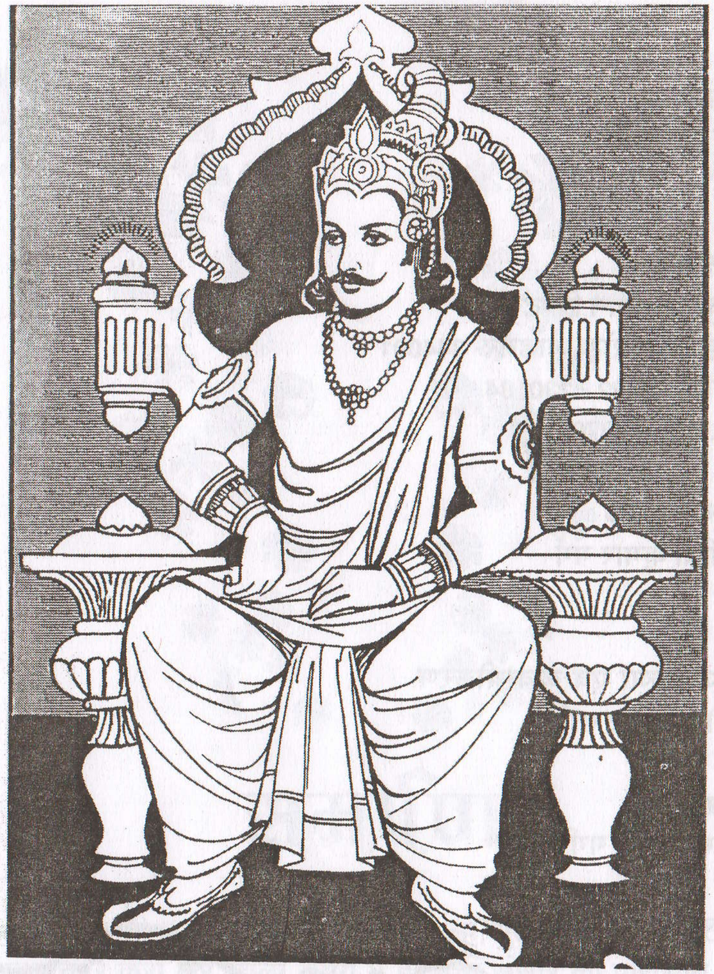

मंगलम् अग्रावतारं, मंगलम् अहिंसा व्रतः।
मंगलम् अग्रणीर्ग्रामणी, श्री वंशकर्तारम् नमः।।

सर्वाधिकार
ओम प्रकाश गर्ग 'मधुप'
अग्रवाल भवन मार्ग,
बाड़मेर - 344001 राजस्थान
मो. 9461491868.

प्रथम वार - 1000
सम्वत - 2067

प्रकाशक
बाबाजी स्क्रीन प्रिण्टर्स,
हाई स्कूल रोड़, बाड़मेर- 344001
फोन - 02982 - 230184
मो. 9414438797

आवरण पृष्ठ
मोहित कुमार गर्ग

साज सज्जा एवं व्यवस्थीकरण
गणेश कुमार गर्ग

लेखक
ओम प्रकाश गर्ग 'मधुप'

मूल्य चालीस रुपये मात्र

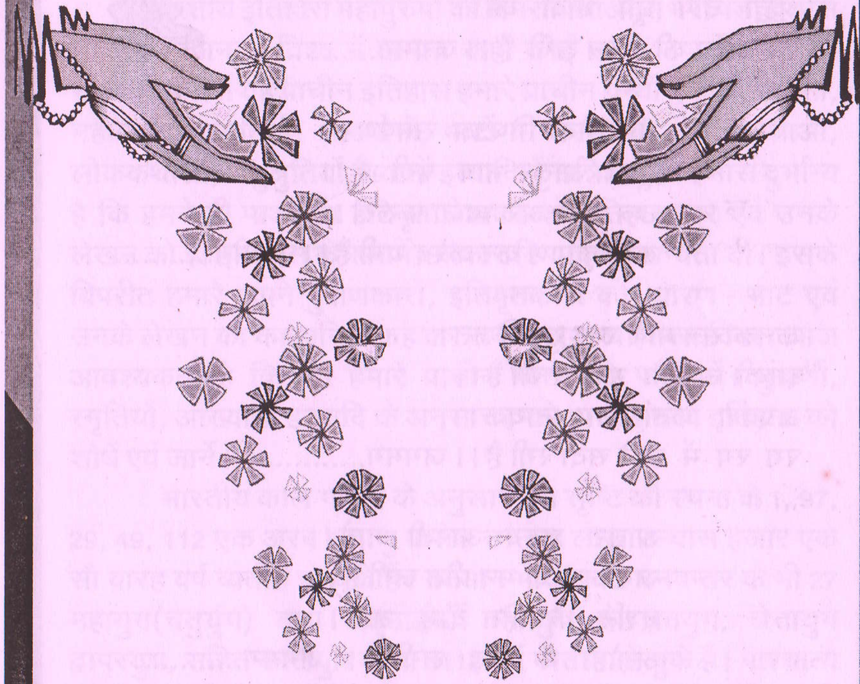

समर्पण

जननी जन्मदात्री मातुश्री तुलसी, जो, मुझे इस सुरम्य सृष्टि का साक्षात्कार करा कर स्वल्प समय में ही स्वयं संसार का परित्याग कर परम्धाम को प्रयाण कर गई। जिनकी स्मृतियों का सम्बल ही मेरे सृजन का आधार बना उनको, श्रृद्धा एवं शत सहस्त्र कोटिशः नमन सहित चरणार्पण!

ओम प्रकाश गर्ग 'मधुप'

अग्र आरती

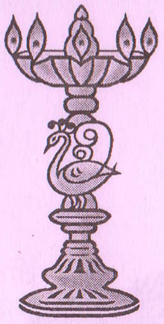

जगमग जगमग जोत जगी है।
अग्र आरती होने लगी है।।
श्रृद्धा दीप धूप भावों का।
उर दर्शन की लगन लगी है।। जगमग..........

मन मेवा मिष्टान्न समर्पण।
पूजा आतुर भाव पगी है।।
छत्र चंवर अरु ध्वजा फरूखै।
कटि कृपाण कर करद थमी है।। जगमग...........

कनकासन मणि रत्न सुसज्जित।
झांकी अनुपम भव्य सजी है।।
अग्रवंश कर्ता जग नायक।
रग रग में छवि सदा रगी है।। जगमग............

आतुर ह्रदय आरती गाते।
जन जन के मन प्रीत जगी है।।
दर्शन के हित दौड़े आते।
अग्रोहा में भीड़ लगी है।। जगमग............

करुणा कृपा कामना पूरी।
होगी मन में आस लगी है।।
हाथ जोड़ मांगू अनुकम्पा।
'मधुप' आप पर आस टिकी है।।जगमग............

अग्रवंश कर्ता जग नायक,
रग रग में छवि सदा रगी है।।
जगमग जगमग जोत जगी है।
अग्र आरती होने लगी है।।

बात की बात

भारतीय इतिहास महापुरुषों की अमर गाथाओं से भरा पड़ा है।ऐसे महापुरुष जिनका विश्व में अन्यत्र कहीं कोई सानी उपलब्ध नहीं हो सकता। हमारा यह प्राचीन इतिहास हमारे प्राचीन ग्रन्थों पुराणों, ख्यातों, महाकाव्यों, स्मृतियों, आख्यानों, भाटों व चारणों के गीतों -गाथाओं, लोककथाओं, अनुश्रुतियों, ख्यातों इत्यादि में सन्निहित है। हमारा दुर्भाग्य है कि हमने ही पाश्चात्य इतिवृत लेखकों को इतिहासकार एवं उनके लेखन को ही इतिहास के रूप में स्वीकार किया तथा मान्यता दी। इसके विपरीत हमारे अपने पुराणकारों, इतिवृतकारों को, चारण - भाट एवं उनके लेखन को काल्पनिक कह कर सर्वथा अमान्य ही कर दिया। आज आवश्यकता है कि हम हमारे प्राचीन गौरव को पहिचानें। पुराणों, स्मृतियों, आख्यानों इत्यादि के अनुसार हमारे प्राचीन सत्य इतिहास को शोधें एवं जानें।

भारतीय काल गणना के अनुसार इस सृष्टि की रचना के 1, 97, 29, 49, 112 एक अरब सत्ताणु करोड़ उन्तीस लाख उन्चास हजार एक सौ बारह वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। वर्तमान में वैवस्वत मनवन्तर के भी 27 महायुग(चतुर्युग) तथा अट्ठाइसवें महायुग के सतयुग, त्रेतायुग द्वापरयुग, सहित कलियुग के भी 5112 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। पाश्चात्य इतिहासकारों के पास तो वर्तमान कलियुग के पांच हजार वर्षों का भी इतिहास संकलित नहीं है। तब वे दो अरब वर्षों के इतिहास की कल्पना भी कैसे कर सकते हैं। वास्तविकता यह है कि महाभारत काल से पूर्व पृथ्वी पर आर्यावर्त के अतिरिक्त अन्य किसी क्षेत्र में सभ्यता का विकास हुआ ही नहीं था। महाभारत युद्ध की महाविभीषिका से दग्ध भरतखण्ड से ही सभ्य मानव समाज पृथ्वी पर अन्यत्र क्षेत्रों में पलायन कर गया। उन्होंने ही विभिन्न क्षेत्रों में अपने अपने स्तर पर तात्कालिक परिस्थितियों तथा उस क्षेत्र विशेष के अनुकूल भिन्न भिन्न प्रकार की सभ्यताओं का विकास किया। कल्पना कीजिये कि छः अगस्त 1945 को हुए केवल दो अणु आयुधों के विस्फोट से प्रभावित हिरोशिमा-नागासाकी में इतने वर्षों के उपरान्त भी जीवन पनपने के उपयुक्त वातावरण का निर्माण नहीं हो पाया है तो

असंख्य अणु-परमाणु आयुधों के प्रहारों से आहत भरत खण्ड का वह क्षेत्र कितने वर्षो तक असामान्य परिस्थिीतियों से जूझता रहा होगा? यही कारण हो सकता है कि महाभारत महासमर के पश्चात् के लगभग दो हजार वर्षो का हमारा इतिहास विस्मृतियों के अंधकार में डूबा है। इसे खोज कर उजागर करने का दायित्व आज के इतिहासकारों पर है। न केवल इस अवधि का अपितु इससे पूर्व काल का अधिकांश इतिहास वृत भी इस अवधि में नष्ट-भ्रष्ट हो गया। कालान्तर में विदेशी आक्रान्ताओं, पर्यटकों इत्यादि द्वारा भी या तो निरन्तर नष्ट किया जाता रहा अथवा अपहृत किया जाता रहा। ऐसे असंख्य पौराणिक ग्रन्थ, अभिलेख, स्मारक इत्यादि विदेशों के संग्रहालयों में आज भी देखे जा सकते हैं। इतना सब कुछ होने के उपरान्त भी आज भी हमारे देश में ऐसी अमोल धरोहरों की कमी नहीं है जिनके आधार पर अपने प्राचीन सत्य इतिहास की शोध की जा सकती है। आवश्यकता है पाश्चात्य अन्धानुकरण की हीन मानसिकता से उबर कर स्वदेशी एवं राष्ट्रीय गौरव युक्त मानसिकता को अपना कर सत्य अनुसन्धान करने की। यह अत्यन्त हर्ष और गर्व का विषय है कि हमारे इतिहासकार अब इस ओर प्रवृत हो रहे हैं।

वर्तमान वैवस्वत मनवन्तर के सत्ताईस महायुग तथा अट्ठाईसवें महायुग के प्रथम तीन युग सहित चौथे कलियुग के भी 5112 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। दूसरे युग त्रेता युग के प्रथमांश अर्थात लगभग अट्ठारह लाख वर्षो पूर्व इस देश में महान समाजवादी, अहिंसावृती, विद्वान, प्रजा वत्सल वैश्य राजा अग्र हुए। ये सूर्यवंशी वैश्य धनपाल/धनद/कुबेर के वंशज थे। दक्षिण प्रदेश में गोदावरी के निकट प्रताप नगर इनका पैत्रक राज्य था। इन्ही राजा अग्र ने उत्तर में आकर अग्रोक नामक नगर बसाया जो आज भी अग्रोहा नाम से विद्यमान है। यहीं पर उन्होने अट्ठारह गणों से युक्त आग्रेय गणराज्य की स्थापना की, जिसकी सीमाएं उत्तर में हिमालय पूर्व में गंगा तथा पश्चिम में मारवाड़ के आसपास के क्षेत्र तक थी। इनके राज्य काल में सर्वप्रथम प्रत्येक नवागन्तुक को प्रति घर से एक ईट और एक मुद्रा देने की अभिनव समाजंवादी परम्परा प्रारम्भ की गई। इन्ही के नाम से अग्र वैश्य वंश की स्थापना हुई। ये अग्रवंशीय वैश्य जन ही कालान्तर में अग्रवाल नाम से जाने जानें लगे। यही अग्रवाल जाति वर्तमान में देश में सबसे बड़ी जाति है। महाराजा अग्र के सम्बन्ध में जानकारी 'महालक्ष्मी व्रत कथा', 'अग्र वैश्य वंशानुकीर्तनम्', 'अग्रवालों की उत्पत्ति', आदि ग्रन्थों एवं भाटों के गीतो आदि से उपलब्ध होती है। श्री वाल्मीकि रामायण, महाभारत, अग्रोपाख्यानम् आदि ग्रन्थों से भी अग्र, आग्रेय गण अग्रवंश इत्यादि के सम्बन्ध में संकेत मिलते हैं। इन्हीं महाराज अग्र के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी संकलित संग्रहित कर प्रस्तुत पुस्तक 'अंशावतार आदि अग्र' में संजोने का प्रयास मैंने किया है। त्रेता युग के उस महामानव को मेरी यह काव्याञ्जली सुधि पाठकों को सम्प्रेषित कर अत्यन्त हर्ष व गर्व का अनुभव हो रहा है। विद्वजनो के साथ साथ सामान्य जनों को भी युगपुरुष महामानव महाराज अग्र के सम्बन्ध में समुचित जानकारी उपलब्ध करा पाने का मेरा उद्देश्य कितना सफलीभूत हुआ है, यह तो आप ही निश्चित व निर्धारित करेंगे। आपकी प्रतिक्रियात्मक टिप्पणियां ही इसका सही मूल्यांकन होंगी।

यह पुस्तक मैं अपनी जननी जन्मदात्री स्वर्गीय मातुश्री तुलसी को सश्रृद्धा समर्पित कर रहा हूं। उन्हीं के कारण तो मैंने इस सृष्टि को देखा है तथा अपने अग्रवंश के सृष्टा आदि अग्र के सम्बन्ध में जानने व जान कर समाज के समक्ष प्रस्तुत करने में सक्षम हो सका हूं। उस वात्सल्यमयी, ममतामूर्ति, स्नेहसलिला, मां को शत सहस्त्र वार नमन वन्दन कर भावनाओं के श्रृद्धा सुमन अर्पित करता हूं।

वर्ष प्रतिपदा संवत 2067, ओम प्रकाश गर्ग 'मधुप'

अग्रवाल भवन मार्ग,
बाड़मेर -344001 राजस्थान
फोन : 02982-230184
मो. : 9461491868

अनुक्रमणिका

	क्या	कहां
1.	स्मृति	9
2.	धनकुबेर	14
3.	आग्रेय	18
4.	अग्रावतार	22
5.	अभियान	26
6.	विस्तार	31
7.	वंशकर्तार	34
8.	परित्याग	40
9.	विश्राम	44

एक

स्मृति

प्रथम सुमिर गुरुदेव को,गणपति करूं प्रणाम।
ज्ञान सुमति शुभ दीजिये, जपूं शारदा नाम।।
जग माता जगदम्बिका, जगत्पिता प्रिय वाम।
पल पल सुमिरूं नमन कर, सकल संवारो काम।।

गुरुवर गजानन ध्यान धर, फिर मातु सरस्वती ध्यावहूं।
कर जोड़ विनती कर, नमन कर श्री चरण शिर नावहूं।।
जगदम्ब माया मातु, लक्ष्मी श्री चरण रज पावहूं।
हे मां मुझे आशीष दो, मैं अग्र चरित् जस गावहूं।।

मां लक्ष्मी फलदायिनी, सकल सिद्धि की खान।
भक्त करे जो कामना, कर दे वही प्रदान।।
मां ममता की मूर्ति, सतत् लुटावे स्नेह।
जो ध्यावे सुत प्रेम से, बरसे करुणा मेह।।
सकल सिद्धियां दायिनी, समृद्धि का भण्डार।
विष्णु प्रिया मां भगवती, सब सुख का आगार।।
पय पायी माया मयी, जग माता जगदम्ब।
दुःख दारिद निज भक्त का, दूर करे अविलम्ब।।
धन वैभव निधि सम्पदा, से भर दे भण्डार।
कृपामूर्ति करुणामयी, देती छप्पर फाड़।।
ममता मुझ पर मातु की, सदा रहे भरपूर।
करुणा कर कमलासने, विपदा राखे दूर।।

विद्या बुद्धि विवेक दे, यह धन अतुल अमोल।
प्रज्ञा कुण्डलि को जगा, ज्ञान चक्षु दे खोल।।
हे मां तेरी शरण में,आया ले विश्वास।
हाथ जोड़ विनती करू, मैं हूं तेरा दास।।
मन की इच्छा पूर्ण हो, इतनी दो आशीष।
अग्र वैश्य गाथा लिखूं, सच्ची बीसो बीस।।

है यह कृपा जगदम्ब की, आशीष मुझको मिल गई।
मां जग भवानी योगमाया, दीठि मुझ पर खिल गई।
वह अति पुरातन गर्व गाथा, जो कि विस्मृत हो गई।
पा कर कृपा, आशीष मां की, दूं उसे वाणी नई।।

मैं अग्र की गाथा लिखूं, उस राष्ट्रमाता पूत की।
उस सत्य नीति न्याय मूर्ति, त्याग करुणा दूत की।
उस स्नेह ममता और समता, के सजग अवधूत की।
यह नीति शुभम् समाजवादी, जिसने ही आहूत की।।

श्री गणपति को नमन करूं, मां लक्ष्मी जी का ध्यान धरूं।
हे मातु शारदे दो बुद्धि मैं ,अग्र वैश्य गुणगान करूं।।
हे मां कमले हे जगदम्बे बस, तू ही माया महामाया है।
यह मूढ़ मधुप अज्ञानी माते, तव शरणागत आया है।।
मैं माते चाहूं यश गाना उस,अग्र पुरुष का अति व्यापक।
जो तेरा भक्त अनन्य हुआ, बस तेरा ही था जो साधक।।
वह वैश्य प्रवर था महा मनुज, जन जन का परम हितेषी था।
वह राजा था राजन्य नहीं, जन पोषक वरन् विशेषी था।।
था समाजवाद का अन्वेषी, अपनी जनता का न्यासी था।
हर प्राणी मानव पशु पक्षी, सबका हित चिन्तक शाषी था।।
उस महा मनुज के जीवन का, इतिहास तनिक बतलाता हूं।
वह था महान कितना जग में, जग वालों को जतलाता हूं।।
हम भूल गए उसको जिसने, हमको समता सन्देश दिया।
राजा हो कर भी जिसने बस, समरसता का परिवेश जिया।।
वह ट्रस्टी था हर जन जन का, संरक्षक था रखवाला था।
समदृष्टि था हर मानव को, निज के सम करने वाला था।।
हर आगत भी अभ्यागत भी, सबके समान हो जाता था।
जब एक ईट औ मुद्रा का ,हर घर से धन पा जाता था।।
यह अद्भुत नव शुचि परिपाटी, त्रेता में तब से चल पाई।
जब नगर बसा अग्रोक अग्र ने, नीति वहां यह बनवाई।।
उस महा पुरुष की ही गाथा, मैं गाऊं मन में आई है।
यह गाथा है अनुपम पावन, यह परम प्रेरणा दाई है।।

परम् प्रेरणा श्रोत थे, (श्री) अग्रवंश कर्तार।
महाराजा श्री अग्र थे, विष्णु के अवतार।।
श्रीविष्णु के अंश थे, अग्र हृदय में राख।
विष्णु सहस्त्र नाम खुद, भरता इसकी साख।।'

पर विस्मृतियों के साये में, उस महा पुरुष को छिपा दिया।
था वैश्य मात्र इस कारण ही, श्रुतियों से उसको मिटा दिया।।
गाथाएं उनकी भरी पड़ी, जो महा शक्ति आराधक थे।
जो क्षत्रिय थे थे बलशाली, जो क्षात्र धर्म के साधक थे।।
उनकी भी गाथाएं गर्वित हो, इतिहास हमारा गाता है।
जो विद्यावान विप्र ब्राह्मण, ऋषि ग्रन्थों के रचियाता हैं।।
गुणगान विप्र राजन्यों के, गाते पुराण नहीं थकते हैं।
इन दो के ही वृत में विचरे, वे जो इतिहास विरचते हैं।।

क्षत्रिय का ही बस किया, राजा कह उल्लेख।
गुरू के नाते विप्र का, पग पग पर अभिषेक।।
नहीं अन्य को मान्यता, राजा या गुरू मान।
चाहे पद बल ज्ञान युत,कितना हो विद्वान।।

यह कितना है आश्चर्यजनक, इतिहास अधूरा है अपना।
कितने ही चरित्र रहे वंचित, पाने स्थान उचित अपना।।
यह ऐसा ही है चरित सदा जो, विस्मृत रहा पुराणों में।
वह महा मनुज जिसने समता, संचार किया सब प्राणों में।।
वह अग्र प्रथम जग का ट्रस्टी, था समरसता का दीवाना।
वह नायक लोक कथाओं का, पर रहा पुराण में अनजाना।।
अनुश्रुतियों गाथा गीत सभी में, उसको गाया है भाटों ने।
जिसके चित्र आज भी शोभित, मानस में घर में हाटों में।।
यह विस्मृति है दोष भयंकर, निज विगत के इतिवृतों का।
भुगतें दुष्परिणाम आज हम, उन इतिहास अधिकृतों का।।
यह अपनी प्रचीन परम्परा, अपने ही इतिवृत पर भारी है।
इसके कारण चन्द प्रपञ्ची, बस रचते इतिहास विकारी है।।

लो अपनी चूक सुधारें अब तो, सत्य शोध व्यवहारों से।
इस धरती पर बिखरे कितने ही, स्मृति के आधारों से।।
धरती पर धरती के नीचे[2], गहरे सागर के भी तल में[3]।
छिपा पड़ा इतिहास पुकारे, मुझको खोजो जल में थल में।।

धरती के भीतर छिपा, गहरे सागर गर्भ।
बाट तके उद्धार की, इतिवृत आहत मर्म।।
अपना यह दायित्व है, करना उसकी शोध।
गर्वित निज इतिहास का, सत्य करावें बोध।।

यह सत्य सनातन है युग युग, जग चार वर्ण से चलता है।
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र, यह सब समाज यों ढलता है।।
हैं प्रथम तीन द्विज कहलाये, जो पढ़ लिख ज्ञानी होते हैं।
हैं शेष शूद्र भोले अबोध सम, जो खुद ही अज्ञानी होते हैं।।
पर द्विज में तीन वर्ण आते, तीजा जग पालक होता है।
जो भरण और पोषण करता, वह वर्ण तीसरा होता है।।
वह वर्ण वैश्य कहलाता है, जो सबका पालन करता है।
बस इसीलिये मां लक्ष्मी का, वह सदा लाडला रहता है।।
इस वैश्य वर्ण में ही तो वह, थे महापुरुष गुण धाम हुए।
जो सकल जगत के थे ट्रस्टी, थे राजा पर निष्काम हुए।।

राजा होकर भी रहे, अग्र सदा निष्काम।
जीवन सारा कर दिया, निज जनता के नाम।।
प्रजा प्रमुख थी राज्य में, गौण रहा परिवार।
जन जन का कल्याण ही, शासन का आधार।।

उस महापुरुष की सन्ताने ही, अब अग्रवाल कहलाती हैं।
वह जग का पहला ट्रस्टी था, हम सब तो उसकी थाती हैं।।
वह जग पालक हरि विष्णु का, है अंश वैश्य कहलाता है।
धन धान्य सम्पदा का रक्षक, यह जग पोषक जग दाता है।।
इस वैश्य वंश के बारे में ही, इतिहास मौन पर साधे है।
क्यों ग्रन्थ पुरातन श्रुति पुराण, में पंक्ति न कोई लाधे है।।

इंगित भर करते हैं पुराण, वह वैश्य हो गया इतना ही।
कुछ और न कोई लिख पाया, वह हो महान फिर कितना ही।।
कितने ही वैश्य मन्त्र दृष्टा, श्रुति शास्त्र ज्ञान प्रवीण हुए।
कितने ही राजा महाराजा, कितने योद्धा रणधीर हुए।।
कितने पालक कितने पोषक, कितने ही दाता दानवीर।
कितने ध्यानी बलिदानी भी, कितने चिन्तक गम्भीर धीर।।
उनका पर वर्णन नहीं कहीं, इन आख्यानों में स्मृतियों में।
होकर सब से ही अवहेलित, यह वैश्य रहा विस्मृतियों में।।
यह पीड़ा मन में व्यापी है, अब कलम इसी से गहता हूं।
मां मुझको दो सामर्थ्य शक्ति, विद्या मैं गाथा लिखता हूं।।
यह गाथा है उस मानव की, जो सचमुच ही जग नायक था।
जन्मा था वैश्य वर्ण में वह पर, जन जन का वह उन्नायक था।।
जिसने हिंसा का खण्डन कर, जग को करुणा सन्देश दिया।
बस जीव मात्र की रक्षा का, निज सन्तति को आदेश दिया।।
जग में न ऊंच नीच कोई, जन जन सब सगे सहोदर हैं।
है रक्षक मनुज नहीं हन्ता, यह पालक महा महोदर है।।
वह महा मनुज था युगनायक, युग युग से नाम अमर उसका।
जन हितकारी था शुभकारी, धन धन कल्याण समर उसका।।

यह जगपालक जगदम्ब, का परम् लाडला पूत।
करता पोषण विश्व का, फिर भी रहा अकूंत।।
जग पालक इस वर्ण में, है अग्रवंश विख्यात।
उसके ही कर्तार का, चरित बखानूं ख्यात।।

----

1. श्रीविष्णुसहस्त्रनामस्तोत्रम् (मूलमात्रम्) - गीता प्रेस गोरखपुर
''अग्रणीर्ग्रामणी'' अग्रणी, अग्रामणी श्लोक 37, पृष्ठ 11
2. अग्रोहा के थेहों की खुदाई
3. खम्भात की खाड़ी में डूबी द्वारिका के अवशेष

दो

धनकुबेर

सृष्टिकर्ता ब्रह्म ने, रचना रची सचित्र।
जल थल पर्वत नभ रचा, प्राणी रचे विचित्र।।
मानस पुत्रों से रचा, सुर नर दनु संसार।
सूर्य चन्द्र नक्षत्र रच, दिया इसे विस्तार।।
दिति से जन्मे दैत्य सब, मनु से मानव पक्ष।
यक्ष दक्ष नर ऋक्ष जन, वानर किन्नर रक्ष।।

ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना कर, मानस पुत्रों को जन्म दिया।
छः मनवन्तर बीते सप्तम, मनु विवस्वान घर जन्म लिया।।
इस मनु के सुत नेदिष्ट हुए, उसके फिर सुत नाभाग हुए।
नाभाग त्याग क्षत्रिय बाना, खुद वैश्य वर्ग के भाग हुए।।
उनकी सन्तति में पीढ़ी दर, पीढ़ी थे तीन मन्त्र दृष्टा।
वे हुए भलन्दन वात्सप्रिय मांकील, शास्त्र सूक्त सृष्टा।।
उनके ही कुल में जन्मे थे, श्री अग्र वे वीर वंश कर्तार हुए।
निज नाम वंश को देकर जो, फिर विष्णु का अवतार हुए।।
उनका ही कुल इस दुनियां में, तब अग्रवंश विख्यात हुआ।
और अग्र नाम आगे चल कर, श्री अग्रसेन भी ख्यात हुआ।।

सप्तम मनु के वंश में,सूर्य वंश विख्यात।
जिसमें युग युग में हुए, महा मनस्वी ख्यात।।
इसी वंश में थे हुए, त्रेता में धनपाल।
धन कुबेर कह कर जिसे, पद सौंपा दिक्पाल।।
उनके ही वंशज हुए, वल्लभ के घर अग्र।
जिनकी गुण गाथा कहूं, ह्रदय हुआ है व्यग्र।।

अग्रवंश के आदि पुरुष थे, वे अग्र हुए थे त्रेता युग में।
मां लक्ष्मी के वरदानों से, जन्मे कुलदीपक युग युग में।।
विंध्याचल के पार दखन में, था वह प्रताप नगर विख्यात।
सूर्य वंश के वैश्य वहां थे, पण्य प्रवीण थे श्रेष्ठि सुख्यात।।

पण्य प्रवीण तो थे ही थे वे, थे कुशल संगठन क्षमतावान।
ज्ञानी थे बलशाली भी थे, नीति निपुण वे थे विद्यावान।।
उसी प्रतिष्ठित वैश्य वंश में, जिसका घर घर था सम्मान।
उनका तेज प्रखर था इतना, जितना रवि होता द्युतिमान।।
सच्चरित शुचिवान तेज बल, बुद्धि ज्ञान विज्ञान निधान।
मन्त्र दृष्ट मांकील के कुल, में जन्मे थे धनपाल सुजान।।
योग्यता लख कर ही उनकी, विद्वजन मोहित हुए तब।
सौंपने नेतृत्व निज का विज्ञ, जन सम्मोहित हुए सब।।
जुट कर प्रबुद्ध गणमान्य जन ने, एक सम्मेलन किया।
सर्व सम्मत हो कर सभी ने, एक मत तब निर्णय लिया।।
ब्राह्मणों ऋषियों ने मिल कर, तिलक कर राजा बनाया।
सौंप कर सत्ता उसे फिर, राज सिंहासन पर बिठाया।।
अति कुशल नीति निपुण वह, राज्य का प्रतिपालक हुआ।
धनपाल राजा था प्रजा वत्सल, विष्णु का आराधक हुआ।।[1]
अकूत धन बल बुद्धिशाली ,राज्य रक्षक वह बना था।
दक्षिणाञ्चल में सबल तब, सामर्थ्यशाली गण बना था।।

दखन देश में था बसा, सुन्दर नगर प्रताप।
वैश्यों के शासन रही, सुख समृद्धि व्याप।।
मान प्रतिष्ठा दबदबा, सबको उनका मान्य।
राजकोष घर लोक सब, आपूरित धन धान्य।।

देवता ऋषियों ने उसके, गुण चरित पहिचान कर के।
दिक्पाल दक्षिण का बनाया, स्वर्ण द्वीप प्रदान कर के।।
धन कुबेर धनपाल धनपति, धनद[2] नाम जाना गया वह।
विप्र ऋषि देवों के द्वारा, कुलश्रेष्ठ भी था माना गया वह।।
शौर्यसेनै[3] प्रतापनगरे अब, धनपाल वैश्य राजा बने थे।
शौर्य बल बुद्ध निपुण थे, जन मन ह्रदय सम्राट बने थे।।
न्याययुत शासन किया कुशल, भूप थे वे नीति पुरन्दर।
धनपाल घर सुत आठ जन्मे, समय संग बलवान सुन्दर।।

शिव अनिल नल नन्द वल्लभ, कुमुद शेखर कुन्द थे।
आठों सुत धनपाल के सब, बुद्धि बल गुण पुञ्ज थे।।
आठ कन्याएं गुणी थी राजा, शालीहोत्र विशाल के भी।
पुत्र वधु उनको बनाया निज, सुतों संग ब्याह के भी।।
पद्मावती-शिव मालती-नल, कान्ति लाये अनिल हित।
नन्द के हित शुभा भव्या कुन्द के, औ भवा थी कुमुद हित।।
सुन्दरि शुचि सुघड़ कोमल ,शेखर की अर्धाङ्ग बनी।
रति से सुन्दर रजा कामिनी, वह वल्लभ की वाम बनी।।[4]
आठ पुत्रों में धनद के हो विरत, नल स्वयं सन्यासी हुआ।
त्याग कर धन सम्पदा सब वह, आप ही वन वासी हुआ।।
शेष सुत सब थे प्रतापी कूच, कर वे सात द्वीपों में गये।
राज्य स्थापित किये निज और, सब भूप अधिपति भये।।
धनपाल बन कर दिक्पाल, दक्षिण द्वीप श्री लंका गये।
राज्य पद सम्मान अपना सब ,सौंप श्री वल्लभ को गये।।
वल्लभ तो निज नाम यथा थे, जन जन के मन वल्लभ प्यारे।
सचमुच के जन वत्सल वे थे, जन जन के हितकारी न्यारे।।
उनका शासन सबको भाया, जन जन ने सुख श्वासा पाई।
सकल राज्य में शान्ति चैन की, मुख मण्डल पर आभा छाई।।
श्रीवल्लभ निज महिषी रजा संग, निपुण कुशल थे शासन में।
प्रजा सुखी थी शत्रु शान्त थे, सब सचिव समर्पित आसन में।।
कुशल सभी आमात्य राज्य के, जनता का हित करते थे।
सेवक सभी राज्य के हित में, तत्पर प्रति पल रहते थे।।
ऐसे थे जन हितकारी राजा, वल्लभ अनुपम राजा थे।
वैश्य प्रवर शासक प्रवीण थे, वे जन मन के राजा थे।।
उनका था सम्मान राज्य में, मान अन्य राजाओं में था।
दक्षिण अंचल क्षेत्र समूचा, झुकता आकर पावों में था।।
धनपाल के यों राज्य का अधिकार, वल्लभ ने लिया अब।
राजपद आसीन कर के शुभ, आशीष विप्रों ने दिया तब।।
हे आर्यपुत्र हे सूर्याशी, हे वैश्य प्रवर धनपाल तनय।
हे नीति निपुण हे शक्तिपुञ्ज, हे धीर वीर गंभर अभय।।
हे धराधीश पृथ्वी वल्लभ, हे लक्ष्मीसुत जन मन वल्लभ।
जन जन मे मन में सदा रहो, तुम बसे अमर हो कर वल्लभ।।

वल्लभ राजा बन गये, पा पैतृक अधिकार।
सत्ता क्षमता सम्पदा, आन खड़ी सब द्वार।।

न्याय नीति अरु धर्म से, शासन हो सम्पन्न।
वैश्य राज्य में अब रहे, कोई नहीं विपन्न।।

----

1. उरुचरितम्- ''धनपालेन नाम्ना वै प्रसिद्धस्तस्कुले ह्योभूत।
तेजस्वी पुरूषो ....सच्चरित्रस्य कारणात्।। 14।।
ब्राह्मणाहि तदा श्रेष्ठेः राज्ये प्रस्थापितः स्वयम्।।
नगरस्य प्रतापस्य ततः स्वामी ह्यभूतदयम्।। 15।।
ततो वैश्य समाजज्ञे धर्मनीतिश्च शाश्वतम्।। 22 ।।

2. -गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित श्री भागवत सुधासागर, ग्यारहवां संस्करण संवत 2042 स्कन्ध नौ में इड़विड़ा(इलविला) से उत्पन्न पुत्र का नाम धनद/कुबेर दिया है। (इन्ही धनपाल/धनद के पुत्र वल्लभ हुए।) -अग्रसैन और अग्रवाल - वैद्य कृपाराम अग्रवाल पृष्ठ 6, ''मानकिल का पुत्र धनपाल (भागवत का कुबेर) हुआ।''

3. श्री महालक्ष्मी व्रत कथा में प्रताप नगर का एक नाम शूरसेन भी दिया गया है
'' आदाय स गतो राजा सागरेव पयोनिधिम्।
शूरसैने गते देशे वैश्यनाथे शची पतीः।। 106।। ''
-महालक्ष्मी व्रतकथा

4. अग्रवालों की उत्पत्ति - भारतेन्दु बाबू राजा हरिश्चन्द्र पृष्ठ 7,8

तीन

आग्रेय

दक्षिण में दिक्पाल बन, गये वैश्य धनपाल।
सुत वल्लभ ने तब लिया, उनका राज्य सम्हाल।।
वल्लभ के सुत अग्र थे, हुए विश्व विख्यात।
उनका अब भी नाम नित, लेते उठ कर प्रातः।।

दक्षिण में था शासन उनका, वैश्य राज्य समृद्धिशाली था।
विप्र देव सबसे अनुशंसित, वह राजन प्रतिभाशाली था।।
उसी राज्य से उत्तर में आ, नगर भव्य अग्रोक बसाया।
गण आग्रेय नया कर थापित, पंथ नया आदर्श चलाया।।
एक ईट मुद्रा देने की घर घर से, नव रीति चलाई।
उस अभिनव शासन समरसता, की भाटों ने गाथा गाई।।
समता ओर समाजवाद का, पहला पाठ पढ़ाया जिसने।
जनता में जन के शासक में, समता भाव जगाया जिसने।।
वह विनम्र था करुणामय था, किन्तु भीरु वह तनिक नहीं था।
ललकारा तो परशुराम से, दिवस अठारह लड़ा वही था।।
हार न मानी थका न पल भर, वार विफल ऋषि के कर डाले।
विस्मित होकर रुके स्वयं ऋषि, दिवस अठारह कर के काले।।
बोले कौन कहां से आये, अद्‌भुत है रण कौशल तेरा।
नहीं किया प्रतिवार वार कुछ, विफल किया पर कौशल मेरा।।

हार न मानी युद्ध में, किया नहीं प्रतिवार।
टारे ऋषि के वार सब, कर के बस प्रतिकार।।
ऋषि ने ही होकर चकित, थाम लिया था युद्ध।
गये सशंकित लौट वे, भृकुटि ताने क्रुद्ध।।

मां लक्ष्मी का भक्त समर्पित, सभी सिद्धियां प्राप्त उसे थी।
सब देवों की ऋषि विप्रों की, कृपा संस्तुति प्राप्त जिसे थी।।
सुन कर उसकी अद्‌भुत गाथा, हुआ समर्पित हरिश्चन्द्र था।
चला उसी के पद चिन्हों पर, पुनः राज्य तब हुआ प्राप्त था।।

वह था राजा वैश्य वंश का, बहुत पुरातन यह गाथा है।
इस धरती की भरत खण्ड की, अपनी यह गौरव गाथा है।।
खुद ही आदि कवि भी यह, कह गये इस तथ्य की।
साख अब भी भर रहा है, ग्रन्थ वह इस सत्य की।।
लौटते ननिहाल से था उनकी, राह में अग्रायणम्।
भरत का विश्राम था यहां यह, कह रहा रामायणम्।।[1]
भाट अपने युग युगों से, गीत ये गाते रहे हैं।
विष्णु का हैं अंश युग युग, अग्र तो आते रहे हैं।।
त्रेता पहला चरण पंचमी, शनि वदि मगिसर मास।
धनद कुल में अवतरे थे, अग्रवर करलो विश्वास।।[2]
श्रीकृष्ण द्वेपायन मनीषी, महर्षि वेदव्यास जी भी।
ग्रन्थ अति पावन पुरातन, साख भर इतिहास की भी।।
लिख दिया आग्रेय गण तो, पाण्डवों से पूर्व भी था।
राज्य था स्वतन्त्र सक्षम, ऐश्वर्य शक्तिपूर्ण भी था।।
राजसूय यज्ञ में जब, दिग्विजय अभियान धारा।
तब दिशा पश्चिम में जीता, क्षेत्र यह निर्विघ्न सारा।।
युधिष्ठिर के यज्ञ में तब, नकुल ने जीता था इसको।
और दुर्योधन के भी हित में, कर्ण ने जीता था उसको।।[3]
इस दिशा में ही तो गण, आग्रेय का विस्तार था।
जिसको तो जीते बिना, दोनो का ना निस्तार था।।
यह बात सीधी साफ लिखते, व्यास जी इतिहास में।
कर्ण ने भी आग्रेय गण को, जीता था इस प्रयास में।।
इतने सारे साक्ष्य हैं ये, झुठलाए जा सकते नहीं।
तथ्य ये इतिहास के तो, अब छिपाये सकते नहीं।।
राष्ट्र के इतिहास का यह, सच उजागर हो गया।
काल की गहराइयों में ही, जो कभी था खो गया।।

सत्य यह इतिहास का है, है हमें अब स्वीकारना।
त्याग दो अब तो विगत के, निज गर्व को नकारना।।
धर्मद्रोही शक्तियों के, अब दुष्चक्र में फंसना नहीं है।
बेधड़क स्वीकार लेंगे, इतिहास को जो बस सही है।।

सत्य है जो है सनातन, ग्रन्थ अपने कह रहे हैं।
साख भी तो युग युगों से, भाट उसकी भर रहे हैं।।
जो बसा जन जन के उर में, लोक अनुश्रुतियों में रम कर।
पीढ़ियों से हैं सम्हाले हम, जिसे पुरखों से सुन कर।।
है यही इतिहास अपना, सत्य इसको जानना है।
छद्म सेक्यूलर के थोथे, झूठ को पहिचानना है।।
अब समय आया है फैंको, सब जाल झूठे तोड़ कर।
सत्य निज इतिहास छापो, कड़ी कड़ी सच जोड़ कर।।
सच उसी इतिहास का अब, अंश मुझको मिल गया गया है।
उस महामानव का जो हमें, इक पथ नया दिखला गया है।।
बस उसी का ही सत्य वर्णन, मैं तो यहां पर कर रहा हूँ।
जो छुपा अब तक है उसको, मैं अनावरित कर रहा हूं।।
अग्रवंश कर्तार हुए थे अग्र, वही थे त्रेता युग में अवतारी।
जन जन के हित में सब सौंपी, जिसने जीवन की पारी।।
जो दक्षिण से चल कर आया, उत्तर को उपकृत करने।
पीड़ित कातर मानवता के निज, करुणा से घावों को भरने।।
वह भारत का गौरव अब भी, जिसने गण आग्रेय बसाया था।
देकर अपना नाम संतति को, जिसने नूतन वंश चलाया था।।

अग्रवंश के नाम से, नया चलाया वंश।
महाराजा श्री अग्र थे, श्री विष्णु के अंश।।
श्री विष्णु के अंश, मानती दुनियां सारी।
तनिक नहीं अपभ्रंश, अग्रवर थे अवतारी।।
उनकी ही सन्तान हैं, इसमें क्या सन्देह।
अग्रवाल के नाम से, धार रहे जो देह।।

वही वंश तब अग्रवंश था जो, अब अग्रवाल कहलाता है।
और नगर अग्रोक आग्रेय का, अब अग्रोहा जाना जाता है।।
अग्र और अग्रोहा अब भी, हम सब के मन में बसा हुआ है।
इनके हित सब कुछ देने को, कटिबंधन अब भी कसा हुआ है।।

अब भी तीरथ मान उसे हम, जाकर नमन किया करते हैं।
धाम पांचवां मानें उसको, श्रृद्धा से भ्रमण किया करते हैं।।

त्रेता का आग्रेय गण, अब अग्रोहा धाम।
प्रथम पुरुष श्री अग्र का, कण कण गूंजे नाम।।
मेला लगता कुम्भ सा, जन उमड़े भरमार।
अग्रवाल आते वहां, करते जय जय कार।।

---

1. -श्री वाल्मीकि रामायण अयोध्या काण्ड सर्ग 71
''ऐलधाने नदीं तीर्त्वा प्राप्य चापरपर्वतान्।
शिलामाकुर्वन्तीं तीर्त्वा अग्नेयं(आग्रेयं) शल्यकर्षणम्।।3''
-'अग्रसैन और अग्रवाल' - वैद्य श्री कृपाराम अग्रवाल पृष्ठ 8 ''वाल्मीकि रामायण में भरत का मातुल गृह से आते हुए आग्रेयगणस्थान में ठहरने का वर्णन है।''
2.- भाटों के गीतों में - ''वदि मगिसर शनि पंचमी, त्रेता पहले चर्ण।
अग्रसेन उत्पन्न भये, कहि भाखे शिवकर्ण।।''
- वैद्य श्री कृपाराम ने अपनी पुस्तक 'अग्रसैन और अग्रवाल' में पृष्ठ 22-23 पर श्री अग्र की जन्म कुण्डली दी है जिसके अनुसार उनका जन्म ''वृश्चिकार्के वदि पंचभ्यां मार्गशीर्ष मासे शनिवारेष्ट 23/38'' पर हुआ।
3. महाभारत-वनपर्व- ''भद्रान् रोहितकांश्चैव आग्रेयान् मालवान् अपि।
गणान् सर्वान् विनिर्जित्य नीति कृत प्रहसन्निव।।20''

चार

अग्रावतार

अपना जो इतिहास है,उसका जानें सत्य।
पुरखे अनुपम रच गये, कितने ऊंचे कृत्य।।
वह राजा जो रच गया, जनता की सरकार।
ग्रन्थ कहें था अंशतः, वह विष्णु अवतार।।

जो कहा पुरखों ने अपने, साख उसी की भर रहा हूं।
और जो कुछ सत्य है वह, समक्ष आपके धर रहा हूं।।
अग्रवालों के जनक जो, श्री अग्र का आग्रेय गण का।
उस महामानव का जो, आदर्श था जन और गण का।।

जिसने अपने नाम से, वंश चलाया धार।
नगर बसा अग्रोक फिर, किया राज्य विस्तार।।
स्थापित आग्रेय गण, नीति नई नव रूप।
जन का ट्रस्टी बन रहा,अग्रोहा का भूप।।

दक्षिण में इक वैश्य राज्य था, समृद्ध था अति वैभवशाली।
उसके भूप परम्प्रिय जन के, कुशल प्रशासक अति बलशाली।।
वल्लभ उनका नाम गुणी थे, पुत्र धनद के जन हितकारी।
यथा नाम प्रजा वल्लभ थे, प्राणी मात्र के हित शुभकारी।।
सत्य प्रिय नीति निपुण वे, हृदय जन जन के चढ़े थे।
वैश्य राजा ने अनेकों, कीर्ति पथ अति नूतन गढ़े थे।।
घर उसी के अग्र जन्मे , इसमें न शक का वास कुछ भी।
यह सनातन सत्य निश्चित, औ अटल विश्वास अब भी।।

मिगसर वद तिथि पंचमी, त्रेता का प्रथमांश।
वल्लभ के घर अवतरित, भये अग्र सूर्यांश।।[1]
इस पुरुषोत्तम मास में, ले कर हरि का अंश।
अग्र नाम धर अवतरित, हुए चलाया वंश।।

मातु रजा की कोख पावनी से, वे जन्मे थे लक्ष्मी पुत्र।
दिया जगत को सबसे पहले, जिसने साम्यवाद का सूत्र।।
वर्ष कितने राज्य शासन हो, अभय निर्भय किया था।
और वल्लभ ने सदा निर्विघ्न, जीवन को जिया था।।
वृद्ध हो कर त्याग शासन, वानप्रस्थ हो वन को गये।
और उज्वल चरित युत, प्रतापी अग्र राजा बन गये।।
बल बुद्धि कौशल शौर्य, साहस विवेक से परिपूर्ण थे।
अग्र साधक मां श्री रमा के ,सब सिद्धियों से पूर्ण थे।।
ख्याति यों फैली जगत में, फैलती ज्यों सौरभ सुमन।
यश कीर्ति गाथाएं प्रसारित, लोक जिह्वा कर गमन।।
लोक से उस लोक में फिर, उस लोक से सब लोक में।
अग्र की गौरव कथाएं ही ,कहें हर कोई हर लोक में।।

यश कीरति सब लोक में,फैल रही सब ओर।
जन जन के उर मच रहा अग्र चरित का शोर।।
सुन्दर सुघड़ सुकान्त तन, स्मित मृदु मुस्कान।
धीर वीर गम्भीर मन, सबमें भरे रुझान।।
उर कोमल करुणाभरा, सरस स्नेह व्यवहार।
दीन हीन जन का करें, पग पग पर उपकार।।
गर्व तनिक कुल का नहीं, नहीं वर्ग का दम्भ।
समरसता सम्भाव के, नीति न्याय स्तम्भ।।
ख्याति सुनी सुनकर जगा, नागसुता उर प्यार।
आप समर्पित हो गयी, प्रियवर उसको धार।।
मन ही मन अरजी करें, पूज पूज जगदम्ब।
मुझको वर देना वही, हे जननी हे अम्ब।।

नागकन्या कुमुद पुत्री माधवी, सुलक्षणा अति सुन्दरी।
उसको पहिनाने को आतुर, अति इन्द्र खुद थे मुन्दरी।।

अग्र की यश कीर्ति सुन सुन, वह विमोहित हो गई।
माधवी खुद हो विमोहित ,वह स्वप्न जग में खो गई।।

मन ही मन संकल्प कर के, वरण उसको कर लिया।
अग्र को उर में बसा कर, निज को समर्पित कर दिया।।
नाग पति ने जब ये जाना, निज सुता के संकल्प को।
हो के उत्साहित सराहा, मुदित मन इस विकल्प को।।
इन्द्र का सन्देश उनको, पूर्व में ही मिल गया था।
किन्तु इससे हृदय उनका, घोर दुःख से भर गया था।।
इन्द्र था सुरनाथ इससे, विश्व सारा था प्रभावित।
जगत भर की आस्था भी, इन्द्र पद में थी समाहित।।
किन्तु पद पर इस समय जो, था चरित से हीन था वह।
रूप यौवन का पिपासु, निपट कामुक क्लीव था वह।।
नागराजा कुमुद को, स्वीकार यह किंचित नहीं था।
और क्या अपवाद हो यह, सोच कर चिंतित वही था।।
इसलिये वह मौन था, और मौन ही में शोध में था।
अग्र राजा का भी चिन्तन, स्वयं उसके बोध में था।।
किन्तु निर्णय में उसे, व्यवधान कुछ कुछ हो रहा था।
क्या सुता को मान्य होगा, हृदय शंकित हो रहा था।।
अब सुना सम्वाद सुखमय, तो कुमुद हर्षित हो गए।
मिट गई चिन्ता हृदय की, सन्देह भी विस्मृत हो गए।।
चुन लिया जिसको सुता ने, ब्याह उससे ही किया।
नाग राजा ने स्वयं बढ़ कर, दान कन्या का किया।।
स्वयं चल कर आ गए वे, ले सुता अग्रपति के राज में।
अब तनिक सा भी विलम्ब, क्यों कर करें शुभ काज में।।

नागराज श्री कुमुद ने, रखा सुता का मान।
खुद ही आये अग्र ढिग, मन में निश्चय ठान।।[2]
दे आसन स्वागत किया, उचित किया सम्मान।
सहमति दे दी अग्र ने, आग्रह उनका मान।।
वरण माधवी का किया, स्वीकृत कर प्रस्ताव।
दो वंशों का लोक में, समुचित बढ़ा प्रभाव।।

दो कुलों में मेल अद्भुत, तब और अनोखा हो गया।
नाग मानव दो समाजों, का जब शुभ समागम हो गया।।

बज उठी शहनाइयां औ ढोल, बाजे अंग थिरके ताल पर।
दो राज्यों में दो वंशों में हर्ष भरा, था गर्व हर एक भाल पर।।
ऐसी सुन्दर शुभ वेला में, घर घर में उत्सव छाया था।
राजा के घर रानी आई, जन जन का मन हर्षाया था।।
अर्धांगिनी अग्र की बन कर, जब आई थी तो हर्षाई थी।
यह रानी तो अग्रवंश की, जननी बन कर ही आई थी।।
अग्रवंश वाले अब तक भी, नागों को मामा कहते हैं।
मातु माधवी की स्मृति में, नाग पंचमी का व्रत रखते हैं।।
नागवंश की माधवी, पट रानी आग्रेय।
दो वंशों का मेल था, समरसता का ध्येय।।
दो संस्कृतियां मिल गई, नया रचा इतिहास।
कीर्तिमान नूतन गढ़े, जीता जग विश्वास।।

----

1. भाटों के गीत– ''त्रेतायुग का प्रथम चरण सुनो उस काल।
जन्मे सूरज वंश में अग्रसेन भूपाल।।''

2. अग्रसेन अग्रोहा अग्रवाल पृष्ठ 264 डा. श्रीमती स्वराज्यमणि अग्रवाल
''एक बार नागराज कुमुद अपनी कन्या माधवी को लेकर राजा अग्र के पास विवाह हेतु आए। नागकन्या के सौन्दर्य पर विमोहित इन्द्र ने उसे स्वयं अपने लिए प्राप्त करना चाहा परन्तु नागराज ने वह कन्या 'अग्रसेन' को ब्याह दी।''

पांच

अभियान

नर नागों के मेल का अद्भुत यह संयोग।
दुनिया में दृष्टान्त था, भाखे ऋषिवर तोग।।
एक नये युग का हुआ, सूत्रपात जग मध्य।
दो धाराओं का मिलन, सुखमय सुन्दर सध्य।।

देवताओं से तो थे ही तब, सम्बन्ध दानवों से भी थे।
किन्तु मानव नाग में तो, सम्बन्ध पहिले तक न थे।।
यह पहल तो कुमुद कन्या, माधवी ने ही करी।
और राजा अग्र ने भी, शुभ मान कर हामी भरी।।
माधवी हो कर अग्र भर्या, प्रताप नगर महिषी बनी।
शक्र को पर यह न भाया, और रार दोनो में ठनी।।
अति नाग कन्या माधवी थी, सुघड़ सुन्दर सोहिनी।
शुचि रूप गुण लावण्य सब, में थी भुवन विमोहिनी।।
उस इन्द्र लोलुप लालची, की माधवी पर आंख थी।
वह चाहता परिणय उसी से, पर न उसकी साख थी।।
पर माधवी के हृदय में तो, अग्र छवि का वास था।
मैं वरण उसको ही करूंगी, यह अटल विश्वास था।।
अब इस नवल सम्बन्ध से, अति नाग को उल्लास था।
था किन्तु चिन्तित इन्द्र अति, वह क्रुद्ध और हताश था।।
इन्द्र होकर कुपित गरजा, क्रूर निर्णय कर लिया।
प्रताप नगरी राज्य में तब, मेंह वर्जित कर दिया।।
बूंद भी बरसा न पानी तो, जल स्रोत सूखे रह गये।
काल भारी पड़ गया बिन, जोत खेत रूखे रह गये।।
विपिन में जा अग्र ने तब, तप महा भारी किया था।
मातु लक्ष्मी की कृपा से, इन्द्र को वश में किया था।।
मां ने दे आशीष कहा था, जाओ कोल्हापुर में राजन्।
नागवंश महाराज महिरथ, के बनो तुम कृपा भाजन।।
वामलोचना सुन्दरावती है, कब से तकती राह तुम्हारी।
वह सुन्दरि कर वरण तुम्हारा, जीवन भर होगी आभारी।।

मां की आज्ञा मान कर तब, वह कोल नगरी को गया।
कोल ध्वंसी नाग महिरथ, से भी जुड़ गया नाता नया।।
वमलोचन सुन्दरावती थी, कमनीय कन्या सर्पिणि।
स्वयम्वर में वरण कर, उसको बनाया सह धर्मिणि।।
ब्याह कर सुन्दरावती से, अग्र ले संग निज नव प्रिया।
देश लौटे हो उल्लसित, प्रिय माधवी ने स्वागत किया।।
इस नये सम्बन्ध से तो, अब कष्ट सारे मिट गये।
सुराधिपति के कोप घन, तो आप ही तब छट गये।।

राज्य निष्कण्टक हुआ, मां की कृपा विशेष।
विपदा के घन छंट गये, संकट हुए निःशेष।।
दो दो नागों से जुड़े, सहज स्नेह सम्बन्ध।
अब शक्ति सामर्थ्य के, नये बने अनुबन्ध।।

कोलाविध्वंसी नागपति का, तब यों पा कर के सहयोग।
शक्ति अतुलित बढ़ी अग्र की, नष्ट हो गए सब दुर्योग।।
इस नाग सुता के परिणय से, वह राज्य बहुत बलवान हुआ।
दी अतुल सम्पदा अहिपति ने, महाराज अग्र धनवान हुआ।।
इस सम्पति से समृद्धि व्यापी, राजा ने जन पर ध्यान दिया।
जन हित के कारज अगणित,किये धन जन पर वार दिया।।

यों सम्हाला राज्य को, न्याय नीति से थाम।
सकल रानिया संग ले, पहुंचा तीरथ धाम।।
ऋषियों के दर्शन किये, पावन सुरसरि तीर।
किया आचमन धन्य हो, अमृत गंगा नीर।।

घूम घूम सब स्थल देखे, परम सुपावन धर्मक्षेत्र के।
जीवन यह कृतार्थ हो गया, धाम मुक्ति के देख देख के।।
स्नान कर हरिद्वार में फिर, दर्शन देवों के किये।
हर घाट गंगा के नहाए, आस्था उर में लिये।।

तीर्थों का भ्रमण दर्शन, विविध देशाटन किया।
आत्मा की तुष्टि भी, आनन्द का अनुभव किया।।
लौटते निज राज्य को वे, हरिद्वार से पश्चिम चले।
आ गये मरू देश में वे, सघन वन में दिन के ढले।।
इस तरह वन विचरण करते, नृप जा रहे थे वे बढ़े।
नरराज गढ़ में वनराज के, गजराज पर थे वे चढ़े।।
बज रहे थे ढोल ताशे और, तुरही शंख तुमुल स्वर में।
हो रहा गुंजित सकल वन , व्याप्त भय सब क्षेत्र भर में।।
शान्त नीरव विजन सारा, था अशान्त इस शोर गुल से।
और प्राणी विकल थे सब, सभ्य मनुज की गर्वित धुन से।।
इस विपिन मरुकान्तर में, दृष्टान्त दुर्लभ सा मिला।
एक अद्भुत यों घटित हो,चल पड़ा नव सिलसिला।।
गर्भिणी इक सिंहनी के तब, प्रसव पीड़ा हो रही थी।
इस तुमुल रव नाद से वह, थी दुःखी अति डर रही थी।।
किन्तु पीड़ित सिंहनी का, प्रसव असमय हो गया।
नवजात शावक सिंह सुन के, शोर क्रोधित हो गया।।
जन्मते ही उछल कर वह, गजराज पर ही चढ़ गया।
नवजात शावक सिंह गरज, गज मार खुद भी मर गया।।

सिंह शावक नवजात ने, किया गरज कर वार।
मरा स्वयं इस खेल में, राजा का गज मार।।
यह अद्भुत दृष्टान्त था, मचा हृदय में द्वन्द्व।
दृष्य कल्पनातीत लख, कैसे हो निर्द्वन्द्व।।
यह धरती ऊर्जामयी, इसमें मीन न मेख।
नूतन मेरे राज्य की, यहीं ठोर दूं मेख।

यह दृष्य अद्भुत देख कर, सब सामन्त स्तम्भित हुए।
शिशु सिंह शावक के अतुल, इस शौर्य से विस्मित हुए।।
मर गया वह आप तो पर, गाथा नई एक रच गया।
देख यह घटना सभी के,उर द्वन्द्व भारी मच गया।।

अग्र स्तम्भित हुआ लख, दृष्य अद्भुत कुछ समय।
सिंह शावक शौर्य कह रहा, यह है यही भूमि अभय।।
यह धरा है वीर प्रसुता, शौर्य बल अति दायिनी है।
अंश जगदम्बा का इसमें,यह धरा फल दायिनी है।।
बस यही घटना छटा बन, अग्र के मन पर छा गई।
है धरा यह वीर प्रसुता बस, यह समझ भी आ गई।।
इस धरा पर राज्य निज का, क्यों न मैं विस्तारित करूं।
सघन वन की कर के सफाई ,नव नगर स्थापित करूं।।
बस नगर अग्रोक तब ही, उस वीर प्रसु वसु पर नया।
उदित अद्भुत वैश्य जन, साम्राज्य जग में हो गया।।
अग्र गणाधिपति हुए, रच इतिहास रचना कर नई।
कीर्ति गाथाएं गढ़ी बढ, चढ़ चली जगत में नित नई।।
शौर्य से बल बुद्धि से, कौशल से प्रसिद्धि प्राप्त की।
अर्चना मां हरि प्रिया की, कर के सिद्धि प्राप्त की।।
नव राज्य स्थापित हुआ, नव नगर समृद्ध बस गया।
अग्र के आग्रेय गण का, फैल दश दिशि यश गया।।
नाग वंशों के सम्बन्धों से भी, शक्ति बढ़ गई थी।
अब सबल विस्तार गण से, आसमां पर चढ़ गई थी।।

दो दो नागों से जुड़े, वैवाहिक सम्बन्ध।
लोक लोक में रम रही ,अग्र शक्ति की गन्ध।।
उत्तर में भी बस गया, रम्य नगर अग्रोक।
अग्र कीर्ति के ध्वज उड़े, लोक लोक हर लोक।।
शक्ति बढ़ी सामर्थ्य भी, बढ़ा जगत में मान।
सुरपति आया शरण में,अपनी गलती मान।।

राज्य समृद्ध कोल्हापुर से, अब सुदृढ़ नाता जुड़ गया।
डर गया देवेश सविनय, आ प्रस्ताव सन्धि का किया।।
स्वयं देवऋषि ने ही आकर , उनमें तब कराई मित्रता।[2]
द्वेष में तो दारिद्र्य ही है, प्रियवर त्याग दो अब शत्रुता।।
अप्सरा दी भैंट में सुर ने, अक्षर रूपा मधुशालिनी भी।[3]
अग्र ने स्वीकार उसको, निज कर लिया वामांगिनी भी।।

अभय आलिंगन किया था, औ मान दे आसन दिया था।
इन्द्र की सन्धि सिकारी, उर लगा आश्वासन दिया था।।
अब तो राजा अग्र का था, तेज अतुलित बढ़ गया।
इन्द्र को वश में किया तो, इतिहास नूतन गढ़ गया।।
देवता नागों से जुड़ कर, अब सर्व शक्तिमान था।
विश्व भर में अब तो उसका, बढ़ गया सम्मान था।।

हुई मित्रता इन्द्र से, नागों से सम्बन्ध।
मान बढ़ा आने लगे, और अतुल सम्बन्ध।।
देश देश में उड़ रही, कीर्ति ध्वजा स्वच्छन्द।
रिपु विहीन हो अग्र अब, राज्य करें निर्द्वन्द।।

----

1. महालक्ष्मी व्रत कथा

"नदत्सु राजतूर्येषु पश्यत्सु सर्वराजसु
विवाहमकरोत् राजा वैशाखे मृगमाधवे ।। 104 ।।

2. महालक्ष्मी व्रत कथा

सन्धि कुरु त्वमिन्द्रेण वृथा द्रोहेण भूपते
तथा कृत्वा स सभामध्ये शक्रम्....आनयत् ऋषिः ।। 109 ।।

3. महालक्ष्मी व्रत कथा

आलिंग्य चाक्षरां दत्वा सुन्दरी मधुशालिनीम्।
अर्हयामास विधिना ययो स्वर्ग च नारदः ।। 110 ।।

छः

विस्तार

इन्द्र स्वयं जब आ गया, ले सन्धि प्रस्ताव।
सकल विश्व में बढ़ गये, वैश्य अग्र के भाव।।
वैश्य अग्र के भाव, दशों दिशि में यश छाया।
तलक अठारह राज्य, वैश्य परचम फहराया।।
किया राज्य विस्तार, हो गई पौ की बारह।
जुड़े और सम्बन्ध, ब्याह कुल किये अठारह।।

सुन्दर सुशीला गुणवती थीं, अग्र की सब रानियां।
धर्म पारायण सती सब, थीं पतिव्रत मृदुवाणियां।।
नाम मित्रा और चित्रा थे, शुभा शीला औ शिखा।
शान्ता व रजा चरा थे, थे शिरा शचि सखी लिखा।।
रम्भा भवानी समा सरसा, माधवी सुन्दरावती थी।
सप्तदश ये रानियां थीं, रूपवती थीं गुणवती थी।।
अप्सरा मधुशालिनी युत, यों अष्टदश रानी हुई।
ज्येष्ट रानी माधवी थी अब, वही पटरानी भी हुई।।
ले अठारह रानियां संग, तप किया यमुना किनारे।
मातु श्री वर दे गई मैं, नित रहूंगी कुल में तुम्हारे।।[1]
वंश तेरा नाम से तव, अग्रवंश ही विख्यात होगा।
तव भुजा आधीन युग युग, राज्य सुख प्रासाद होगा।।[2]
मां से पा वरदान विशांपति, अग्र लौटा राज्य में।
संगठित नव राज्य किये, अट्ठारह गण राज्य में।।
नगर निज अग्रोक में फिर, विनिवेश इस भांति किया।
कलि काल के भी आगम तक, उपभोग संतति ने किया।।
द्वादश योजन क्षेत्र में पुनिः, विस्तार नगरी का किया।
कोट से परकोट से उसे, चहुं ओर से रक्षित किया।।
पथ चतुष्पथ राजपथ उद्यान, उपवन पुष्पित वाटिका।
भवन परिसर भुवन मोहे मन, भव्य विराट अट्टालिका।।

कूप वापी सर सरोवर, अति सुभग नगरी मध्य थे।
गोपुरम् शुभ द्वार शोभित, नर देव सकल विमुग्ध थे।।

अनुपम नगरी है बनी, मुग्ध देख कर देव।
मां लक्ष्मी का वास फिर, इसमें रहे सदैव।।
लज्जित हो अमरावती, इसका वैभव देख।
तीन लोक तुलना नहीं, इसमें मीन न मेख।।
इस वैश्यों के राज पर, मां की कृपा विशेष।
वैभव बरसे रात दिन, दु:ख दारिद्र्य निशेष।।
ऐसी है करुणा मयी, देती सब कुछ वार।
मां तो ममता से पगी, सतत लुटाती प्यार।।

केन्द्र नगरी का जहां था, भव्य मन्दिर बनवा दिया।
आह्वान कर मां भगवती, विष्णु प्रिया स्थापन किया।।
अष्ट प्रहर श्रुति सिद्ध स्तुति, साम गान होते जहां।
स्वयं राजा राज कुल युत, श्रद्धावनत आते वहां।।
हवन होते यज्ञ होते नित्य, ही नैवेद्य अक्षत आहुति।
प्रातः सांय शंख ध्वनि युत, हो धूप दीपित आरती।।
अमरावती को भी लजाया, इस भव्य नगरी के रूप ने।
वंश का विस्तार संवर्धन यहां, पर ही किया उस भूप ने।।
आग्रेय गणराज्य विकसित हुआ, विश्व में ख्याति हुई।
विस्तरित हो गण अठारह, तक अग्र कुल जाति हुई।।
विंध्याचल के पार तो पहिले,ही थापित वह राज्य था।
लगा हिमालय को भी छूने, अब उनका साम्राज्य था।।

उत्तर हिमगिरि को छुआ, दक्षिण नगर प्रताप।
गंगा तट तक पूर्व में, पश्चिम मरुधर व्याप।।[3]
हुआ राष्ट्र में इस तरह, वैश्य राज्य विस्तार।
समता और समाज ही, जिसका था आधार।।
सन्धि मित्रता प्रेम से, अन्य राज्य आवर्त।
सम्बन्धों से जुड़ गया, पूरा आर्यावर्त।।

शेष वासुकी वंश में, कुमुद महीरथ नाग।
सम्बन्धों से बन्ध गया, धुर दक्षिण का भाग।।
उत्तर में सुर लोक तक, पश्चिम सिन्धु प्रदेश।
सन्धि सूत्र में बन्ध गये, पूरब गौड़ प्रदेश।।

----

1. महालक्ष्मी व्रत कथा
   युगद्वयं तपस्तेपे कालिन्दी कलकानने। 122।
2. महालक्ष्मी व्रत कथा
   अद्यारंभ्य कुले....तव नाम्ना प्रसिध्यति।
   अग्रवंशीया हि प्रजा: प्रसिद्धा: भुवन त्रय।। 127 ।।
   भुजा प्रसादं तव वसेत् नान्यस्मै प्रतिदापयत्। 128।
3. अग्रवालों की उत्पत्ति "तब राजा ने आकर अपना राज्य बसाया उस राज्य की उत्तर सीमा हिमालय पर्वत और पंजाब की नदियां थीं और पूर्व और दक्षिण की सीमा श्री गंगाजी और पश्चिम की सीमा यमुना जी से लेकर मारवाड़ देश के पास के देश थे।" पृष्ठ 12

सात

वंशकर्तार

सन्धि की नाते जुड़े, जुड़े स्नेह सम्बन्ध।
नीति युक्ति से राज्य के, पाट दिये सब रन्ध्र।।
शान्ति सकल साम्राज्य में,जन जीवन सम्पन्न।
मातु कृपा कुल में हुए ,महा पुरुष उत्पन्न।।

मां कृपा से अग्र को सब, सन्तान सुख व्यापक हुआ।
तीन तीन तो पुत्र पुत्री एक, एक प्रति रानी हुआ।।[1]
नाम पुत्रों के गिनाता हूं, तुम्हें सब धैर्य से सुन लीजिये।
सब के सब सुत थे सयाने, यह हृदय में गुन लीजिये।।
ज्येष्ट विभु था फिर विरोचन, वाणी पावक अनिल था।
केशव रक्त विशाल धन्वी, धामा पयोनिधि दवन था।।
कुमार पामा माली कुण्डल, कुश मन्दोकन विकाश थे।
विरण विनोद वपुन बलि हर, वीर रव मल्लीनाथ थे।।
दन्ती दाड़िमीदन्त सुन्दर कर, खर गर शुभ था पलश।
अनिल सुन्दर धर प्रखर था, नन्द कुन्द सुत था सुयश।।
कान्ति शान्ति पय्यमाली था, कुलुम्बक था सत्य था।
क्षमाशाली युग विलासद संग, धर्म भूत अनुकम्प था।।
दो पुत्र उनके और थे, पर नाम मिलता है नहीं।
शास्त्र अपने मौन हैं, उल्लेख पर मिलता सही।।

एक एक कन्या हुई, प्रति रानी यह सत्य।
उनके सबके नाम भी, गिनवाना औचित्य।।
दया शान्ति और कला, कान्ति तितिक्षा नाम।
अधरा अमला महि रमा, शिखा हुए दश नाम।।
रामा यामिनि अर्जिता, जलदा शुभा यथेष्ठ।
शिवा अमृता नाम सब, पुण्या कितने श्रेष्ठ।।[2]

परिवार बढ़ कर जब शताधिक, अग्र का था हो गया।
तब हृदय में सोचा नृप ने अब, मैं कुछ तो करूं नया।।

जा कर गुरु से मन्त्रणा की, यज्ञ करना है वंशकर।
आशीष गुरु ने दी खुशी से, हृदय इच्छा जान कर।।
सब रानियों को संग ले कर, अष्टदश तब यज्ञ किये।
यज्ञ ऋषि के नाम पर ही, गोत्र सब पुत्रों को दिये।।
किन्तु बलि जब अश्व की, ऋषि यज्ञ में देने लगे थे।
शूल से जैसे अनेकों तब, वैश्यपति के उर में लगे थे।।
हो व्यथित तब अग्र ने, ऋषियों से निवेदन यों किया।
यज्ञ में बलि जीव की भला, यह धार्मिक कैसी क्रिया।।
रोकिये इसको ये है घोर, हिंसा यह न अंगीकार है।
मूक निरीह इन प्राणियों पर, यह कैसा अत्याचार है।।
जगत्पिता को उसकी ही, सन्तान की बलि दे रहे।
इस तरह जगदीश के खुद, कोप को सिर ले रहे।।
वो जगत का जो पिता है, यह यज्ञ है उसके लिये।
इसलिये पशु को नहीं, फल-फूल लें हवि के लिये।।
जीव हिंसा यज्ञ में हो, प्रभु को न यह स्वीकार है।
नाम पर कर्तार के ही, इस कृत्य को धिक्कार है।।

पाप है यह जीव हत्या, धर्म हो सकता नहीं।
मैं कदापि यज्ञ में यह, कृत्य कर सकता नहीं।।
हे ऋषि घृत पुष्प फल की, यज्ञ में बलि दीजिये।
पाप है यह घोर हिंसा, कर्म यह तज दीजिये।।

ऋषिगण रहे मौन ही सारे, समझ कर भी भाव को।
कर नहीं सकते थे वे पर, स्वीकार इस प्रस्ताव को।।
यज्ञ में बलि प्राणियों की, यह इन्द्र का ही विधान है।
न करें यदि ऐसा तो यह भी, इन्द्र का ही अपमान है।।
यदि नहीं बलि दी गई तो, यज्ञ नहीं यह मान्य होगा।
इन्द्र भी होगा कुपित तो, नष्ट सब धन धान्य होगा।।
समझ ऋषियों की विवशता, अग्र ने मां को चितारा।
उनसे पा संकेत सादर, ब्रह्म को हो आतुर पुकारा।।
हे मातु लक्ष्मी जगत सृष्टा, हे विधाता आप तो सर्वज्ञ हैं।
प्राण हर ले प्राणियों के क्रूर, होकर वह भला क्या यज्ञ है।।

आपका ही नाम ले कर, आपकी सन्तान का वध कर रहे।
हे पिता परब्रह्म हम यह, क्रूर पैशाचिक कर्म कैसा कर रहे।।
यह न मानवता का बाना, धर्म भी यह कदापि है नहीं।
देव ऋषि सब विप्र इसको, यों कह रहे तथापि है सही।।
किन्तु मेरा उर न माने धर्म, इस घृणित दुष्कार्य को।
मैं न कर पाउं मान्य प्रभुवर, इस दूषित स्वीकार्य को।।
इसलिये हे देव आकर आप, मार्गदर्शन सबका कीजिये।
क्या उचित है और अनुचित, क्या है आप निर्णय कीजिये।।

मां की आज्ञा पा किया, ब्रह्मा का आह्वान।
प्रकट हुए श्री ब्रह्म तब, रखा अग्र का मान।।
कहा न हिंसा यज्ञ में, मुझको हैं स्वीकार्य।
जगपोषण ही यज्ञ है, हिंसा कर्म अनार्य।।

ब्रह्म ने खुद हो प्रकट तब, विनय अंगीकार कर ली।
अन्न फल घृत दुग्ध की बस, आहुति स्वीकार कर ली।।
हिंसा तो है पाप भयंकर, यह अपराध भला क्यों करते हो?
हे विप्रों हे ऋषियों बोलो, इसको धर्म भला क्यों कहते हो??
बलि का अर्थ नहीं है हिंसा, यह अनर्थ तुम क्यों करते हो?
त्याग समर्पण आशय इसका, है क्यों न हृदय में धरते हो??
पत्र पुष्प फल नैवेद्यों की, हवि देवो घृत अक्षत की ही।
हो कर संकल्पित बलि, दो विकार क्षत विक्षत की ही।।
यज्ञ आत्म शुद्धि का साधन, विकृत इसका रूप करो मत।
जीव मात्र का संवर्धन हो, यों सृष्टि का संहार करो मत।।
मैं हूं अति प्रसन्न राजन, निर्णय सब विधि उचित आपका।
यह संसार रहेगा युग युग, ऋणि और कृतकृत्य आपका।।
आप अहिंसक यज्ञ कर रहे, यही मुझे स्वीकार्य सदा है।
यह परिपाटी ही हे ऋषियों, मनवांछित फल नित्य प्रदा है।।
मैं करता स्वीकार मान्यता, देकर पावन यज्ञकर्म को।
धन्य धन्य हे अग्र आपको, समझा तुमने धर्म मर्म को।।
यज्ञ पूरे हो गये इस भांति,सारे जीव बलि वर्जित हुई।
वंशकृत इस यज्ञ से तब नव, अग्र संस्कृति सर्जित हुई।।

प्रत्येक रानी के सुतों को यों, पृथक इक गोत्र दिया।
वंशकर यों यज्ञ कर के निज, वंश का सर्जन किया।।
जिस रानी को संग लेकर, बैठे थे जिस जिस यज्ञ में।
उसके पूज्य पुरोहित का ही, गोत्र नाम दिया अग्र ने।।
जिस रानी के संग बैठ कर, जिस ऋषि से था यज्ञ कराया।
उस रानी की सन्तति का, गोत्र उस ऋषि के नाम धराया।।
गर्ग ऋषि से गर्ग बना तो, गोविल से गोयल कहलाये।
कश्यप दीक्षित कुच्छल, कौशिक से कंसल बनपाये।।
बने वशिष्ठ से बिन्दल सारे, और धवन से धौम्य हो गये।
शिष्य जैमिनि के जिन्दल, शाण्डिल्य शिष्य सिंहल हो गये।।
यज्ञ गुरु मैत्रेय बने तो, रानी सुत मित्तल कहलाये।
ताण्ड्य पुरोहित बने यज्ञ में, उसके सुत तिंगल कहलाय।।
तेत्ति से तायल वत्स से बंसल, धन्वास शिष्य धारण बने।
नागेन्द्र से नागल मंगल माण्डव से, और्य से ऐरण गोत्र बने।।
मुद्गल ऋषि से मधुकुल अरु,गौतम से गोयन नाम दिया।
यों ही अट्ठारह गोत्रों को सब, ऋषियों के ही नाम किया।।

यज्ञ अठारह हो गये, विधिपूर्वक सम्पन्न।
ऋषि ब्राह्मण संतुष्ट थे, देव हुए प्रसन्न।।
एक एक प्रति यज्ञ में, बैठी थामे हाथ।
एक एक कर रानियाँ, क्रम से बैठी साथ।।
उसी यज्ञ से दीक्षित, रानी की संतान।
गोत्र नाम उनको दिया, ऋषि को दे सम्मान।।
यज्ञपुरोहित नाम से, बने अठारह गोत्र।
अग्रवंशिय बन गये, श्रीवल्लभ के पौत्र।।
प्रकटे हरि का अंश ले, जगहित धर अवतार।
महाराज अब बन गये, अग्रवंश कर्तार।।
श्री विष्णु के अंश ने, किया विष्णु का काम।
यज्ञों में हिंसा नहीं, बलि को दिया विराम।।
वैश्य प्रवर इस वंश का, रहे जगत में मान।
छत्र चंवर सिर पर रहे, लक्ष्मी का वरदान।।

मातु लक्ष्मी की कृपा से, सब सफल कारज हो गये।
सिद्ध अब होगे मनोरथ, सब प्रशस्त मारग हो गये।।
दिन लद गये विपत्तियों के, शांति सुख होगा सदा।
और यश वैभव बरसता, घर घर रहेगा सर्वदा।।
जिस ऋषि का नाम मिला, उसके वह कुल गुरु कहलाया।
यों गोत्र अठारह से जुड़ कर, यह अमर अग्रकुल कहलाया।।
वंशकृत परिवार को कर के, फिर गोत्र सबको दे दिये।
सब अट्ठारह रानियों के गोत्र, यों अट्ठारह ही किये।।
प्रत्येक रानी के सुतों का, यों गोत्र निर्धारित हो गया।
यज्ञ ऋषि के नाम पर ही, हर गोत्र आधारित हो गया।।
यों अहिंसक यज्ञ कर के, नव दृष्टान्त जग को दे दिया।
श्रेय भी अहिंसा व्रती का, शुभ कर्म कर के ले लिया।।
इन सभी यज्ञों का उनको, अति श्रेष्ठ प्रतिफल भी मिला।
वंशकृत परिवार हो कर,था द्वार प्रगति पथ का खुला।।
पुत्र पुत्री अग्र के सब, वे धन्य इन यज्ञों से हुए।
रूप गुण धनवान कीर्ति, मान से सब सज्जित हुए।।
निर्मल उनका चरित्र, उर से हो गये उदार वे।
यश बढ़ा भूलोक पर हुए, वरुणेन्द्र जैसे मान्य वे।।
थे यभी सम्पन्न पहले, वे और समृद्धि पा गये।
स्वर्ग से भी बढ़ अधिक वे, ऐश्वर्य सिद्धि पा गये।।
राज्य में उनके कोई भी, दीन दरिद्री ना रहा घर।
सर्व सुख सम्पन्न थे सब, सर्व समृद्ध थे वहां पर।।
वंशकृत परिवार को कर, फिर गोत्र सबको यों दिये।
सब अठारह रानियों के भी, गोत्र अठारह ही किये।।
प्रत्येक रानी के सुतों का, गोत्र यों निर्धारित हुआ।
यज्ञ ऋषि के नाम ही पर वह, गोत्र आधारित हुआ।।
अष्टदश सब रानी सुतों के, तब गोत्र अठारह हो गये।
और उसी दिन से ही सारे, वंशज अग्रवंशी हो गये।।
वह दिवस शनिवार था औ, शुक्ल आश्विन मास था।
गोत्र कृत कुल को किया तब, प्रतिपदा शुभ वास था।।[3]

यज्ञ अठारा ही किये, किया गोत्र कृत वंश।
अग्रवंश प्रचलित हुआ, लेकर उनका अंश।।
पुत्र अठारा रानियां, भी अट्ठारह मात्र।
तीन तीन जिनके हुए, चौपन पुत्र सुपात्र।।

अग्र के चौपन पुत्रों के भी, तीन तीन सुत पौत्र हुए।
और उनके भी तो फिर, तीन तीन पुत्र पौत्र प्रपौत्र हुए।।[4]
यों अठारह रानियों की, सन्तति नित नित बढ़ती गई।
गोत्र अठारह बन गए तो, सृजित हुई अग्र जाति नई।।

---

1. महालक्ष्मी व्रत कथा
''त्रीन् त्रीन् पुत्रान् सुतैकैका सर्वास्तत्रग्रसमुद्भवा।। 147
2. महालक्ष्मी व्रत कथा श्लोक 142 से 147
''विभुर्विरोचनो वाणी पावकोऽनिल केशवाः।
विशाल रक्तौ धन्वी च धामा पामा पयोनिधि
कुमारो दवनो माली मन्दोकन कुण्डलौ।। 142
कुशो विकाशो विरणो विनोदो वपुनो बली।
वीरो हरो रवो दन्ती दाणिमी दन्त सुन्दरौ।। 143
करो खरो गरः शुभ्रः पलशोऽनिलसुन्दरः।
धर प्रखरौ मल्लीनाथो नंदो कुन्दः कुलुम्बकः।। 144
कान्तिः शान्ति क्षमा शाली पयमाली विलासदः।
कुमारौ द्वौ पुत्रीश्च शृणु शौनक वक्ष्मिते।। 145
दया शान्तिः कला कान्तिः तितिक्षा चाधराऽमला।
शिखा मही रामा रमा यामिनी जलदा शिवा। 146
अमृता अर्जिका पुण्याष्टादश सुताः शुभाः।
त्रीन त्रीन पुत्ररन् सुतैकैकां सर्वास्वग्र सुमुद्भवा।। 147
3. भाटों के गीत –''अश्विनी शुक्ला प्रतिपदा, त्रेता पहले चर्ण।
अग्रवाल उत्पन्न भये, सुनि भाखे शिवकर्ण।।''
4. महालक्ष्मी व्रत कथा
तेषु तेषु त्रय पुत्राः तावच्च पौतृकाः ।। 148

आठ

परित्याग

नया वंश सर्जित हुआ, अग्रवंश दे नाम।
जग पालन जनहित सदा, जिसका केवल काम।।
अग्र अग्र से अग्रकुल, अग्रवंश विख्यात।
अग्रवाल अब हो गया, जाति नाम सुख्यात।।

अग्र शासन में सदा ही, आग्रेय उन्नति कर रहा था।
शक्ति यश धन धान्य सब में,शीर्ष पर वह चढ़ रहा था।।
अग्र का बस ध्येय यह था, जन मात्र का कल्याण ही हो।
वह सतत रत था इसी में, उससे सभी का त्राण ही हो।।
राज्य में मेरे न कोई अब से, दीन दुखियारा रहेगा।
हतभाग से हो दरिद्र उसका, राज्य प्रतिहारा बनेगा।।
राज्य के सम्पन्न जन सब, स्वयं ही सहयोग दे कर।
निज बराबर कर ही देंगे, वे एक मुद्रा ईट दे कर।।
राज्य राजा का नहीं है, है धरोहर यह तो प्रजा की।
राज के हर काज में भी, रहती जरूरत जन रजा की।।
मैं तो बस सेवक जनता का, एक प्रतिनिधि मात्र मैं हूं।
न्यास पावन राज्य सारा, जिसका न्यासी मात्र मैं हूं।।
अग्र की यह भावना थी, सौ टका बस शुद्ध मन से।
हृदय से ही था समर्पित, और सेवक वह था तन से।।
बैठ कर भी राज पद पर, विरक्त की दृष्टि रखे था।
राज्य तो सत्ता प्रजा की, स्वयं को ट्रस्टी लखे था।।
इसीलिये जग कहता उसको, वह सृष्टि का सुन्दर गहना।
नहीं तनिक भी अतिशय उक्ति, 'वह त्रेता का ट्रस्टी' कहना।।
विष्णु सहस्त्र नाम में अंकित, अग्र नाम श्री विष्णु जी का।
स्वयं सिद्ध करता अवतारी, अग्र अंश श्री विष्णु जी का।।

ट्रस्टी राजा अग्र थे, अंश विष्णु अवतार।
यज्ञ किये जब वंशकर, बने वंशकर्तार।।

उनके जीवन सूत्र तो, अब भी हैं आधार।
अग्र सुतों के आज भी, बता रहे आचार।।

वंशकर्ता बन गए वे औ नव, अग्र वंश प्रचलित हुआ।
एक मुद्रा ईट का सहकार, व्रत नूतन संचलित हुआ।।
यों बढ़ी बढ़ती रही थी, अग्र सन्तति इस जगत में।
वैश्य कुल का धर्म पाले, शुचि शुद्धता लेकर रगत में।।
मां के वर से दिव्य जनों ने, युग युग में अवतार लिया।
इसीलिये जन जन ने हमको, आप महाजन नाम दिया।।
युग बदले और रहे बदलते,यह वंश विस्तारित हुआ।
समय के संग नाम इसका, अग्रवाल उच्चारित हुआ।।
राज्य गण आग्रेय भी बदला, तो अग्रोत्कान्वय हो गया।
और फिर अग्रोक अग्रोदक, नगर से अग्रोहा ही हो गया।।
अग्र ने शासन किया था कुल, वर्ष एक सौ आठ भर।
धर्म नीति निपुण राजा ने, करुणा अहिंसा साध कर।।
योगमाया श्री की आयुष पा, फिर राज्य सौंपा पुत्र को।
लेकर विदा हो वानप्रस्थी, राजा चले तज पद छत्र को।।
मोह माया राज्य शासन तज, मोड़ कर मुख वे चले।।
महल प्रासादों के लुभावन, सब छोड़ कर सुख वे चले।।
वन गमन से पूर्व एकत्रित, किया सब सन्तानो को।
स्नेहयुत हो उसने बताया, राज्य मानव धर्म सबको।।
पुत्रों सुनो लक्ष्य जीवन का, जीव मात्र का हो हितकारी।
मानव वही धन्य है पुत्रों, जिसका जीवन हो सद् आचारी।।
इसीलिय हे पुत्रों सम्बल सुन लो, कभी धर्म का नहीं त्यागना।
सत्य अहिंसा न्याय नीति को, यत्न सहित तुम सदा साधना।।
हम हैं वैश्य जगत का पालन, करना बस है धर्म हमारा।
जीव मात्र की रक्षा करना, आजीवन सत् कर्म हमारा।।

जगपोषक है वैश्य तो, पालन करना धर्म।
जीव मात्र हित वास्ते, करता संचय कर्म।।

ज्यों मधु का संचय करें, मधुमक्खी अविकार।
जीव मात्र उपभोग कर, पाता तृप्ति अपार।।
त्यों ही करता वैश्य भी, संचय जग के हेतु।
जीव मात्र को बाँटता, बाँध स्नेह का सेतु।।

हिंसा में हित नहीं तनिक भी, हृदय अपावन कर देती है।
दूषित मलिन पाप भावों से, उर आप्लावन कर देती है।।
जगत्पिता सृष्टा का सर्जन, जीव मात्र है सन्तति उसकी।
सब में प्राण उसी ने डाले यह, सृष्टि है सब रचना उसकी।।
फिर क्या अधिकार किसी को, किसी जीव का वध करने का।
ले कर नाम देव का बलि का, घृणित कर्म पशु वध करने का।।
अपना राज्य मुक्त हो इससे, हिंसा पर प्रतिबन्ध यहां हो।
प्रेम दया सब जीव मात्र पर, शुद्ध मधुर सम्बन्ध यहां हो।।
जन जन में हो भाईचारा, सुख दुःख में सब सबके साथी।
मिल जुल कर सब रहें कि, जैसे एक दूसरे के सब भाथी।।
शैशव यहां स्नेह से सिंचित, वृद्ध जनों का होवे आदर।
यौवन कर्म निभावे अपना, सब का सब ही करें समादर।।
सबको अवसर मिले बराबर, काम धाम अरु सुविधाओं का।
नहीं तनिक भी अग्र राज्य में, रहे अंश भी दुविधाओं का।।
सत्य न्याय से शासन करना, जन जन का हित रहे ध्यान में।
राजा हूं मैं यह राज है मेरा, कभी न रहना मदाभिमान में।।
हम तो न्यासी मात्र राज्य के, जनता ने सौंपा है हमको।
न्याय सहित हमको वह करना, जो हितकारी होवे उसको।।
इतना कह आशीष दिया ली, विदा गमन वन को कर डाला।
त्याग राज्य बन कर सन्यासी, बनवासी का बाना ढाला।।
संग रानी माधवी प्रिय के वे, चले गोदावरी के तट पर गये।
सुन्दर मनोहर ब्रह्मसर पर, जा कर तपस्यारत दोनो भये।।[1]
युग युगों तक की तपस्या और, सन्यासमय जीवन जिये।
तुष्ट होकर मां भगवती श्री ने, स्वयं आ कर दर्शन दिये।।
हे वैश्यपति तुम धन्य हो, तुमने किये अद्भुत करम।
मन वचन अरु कर्म से, तुमने निभाया निज धरम।।

अब तुम्हारे इहलोक के, सारे करम पूरे हो गए हैं।
परम दुर्लभ मोक्ष पद के, स्वप्न तव पूरे हो गए हैं।।
साथ दे कर तव माधवी ने, धर्म पत्नी का निभाया।
संग तव ही इस सती ने, परम् पद अधिकार पाया।।
त्याग कर इस लोक को तुम, अब चलो गौलोक को।
गगन में नक्षत्र सा निरखेंगे, तेरे अग्रसुत आलोक को।।
दे कर यों आशीष इच्छित, फल मां अन्तर्ध्यान हो गई।
पार्षदों की पालकी आई, उन्हें गौलक सादर ले गई।।
मां कृपा से सफल जीवन के, सभी मनोरथ मानो हुए।
अन्तकाल में लोक को तज, गौलोक वासी दोनो हुए।।

द्युतिमान रानी माधवी के संग, अग्र नभ में आज भी है।
अटल ध्रुव तारे के संग संग, वे विलोकित आज भी है।।
मां माधवी औ दादा अग्र का, ज्यों संग जीवन भर रहा।
हम भी जियें जीवन को ऐसे, नित प्रेम रस सरिता बहा।।
आशीष उनकी मिल रही है, यह सोच दर्शन कर रहे हैं।
आदर्श मय उनके चरित व्रत, नित प्रेरणा भरते रहे हैं।।

अटल है ध्रुव के निकट, अग्र माधवी नित्य।
मां श्री का वरदान यह, सोलह आने सत्य।।
इसीलिये हम अग्रजन, ध्रुव तारे को देख।
नव परिणित की मांग में ,भरते मंगल रेख।।

....

1. महालक्ष्मी व्रत कथा
ज्ञातीन सर्वान् अनुज्ञाप्य ययो सः भार्ययासह।
पंच गोदावरी यत्र तत्र ब्रह्मसरः शुभम्।। 152
तत्र भूरिस्तस्तेपे गोलोकं परतः परम्।
जगाम..........सस्त्रीकः कमलाज्ञया।।155

नौ

विश्राम

अग्रवालों के जनक थे, त्रेता के श्री अग्र।
उनकी शुभ चरितावली, गाता होकर व्यग्र।।
मन पावन हो श्रवण कर, उपजे आत्मानन्द।
आदि पुरुष गुण गान से, घर घर परमानन्द।।

यह चरित श्री अग्रवर का नित, आदर्श मेरा है रहा।
सबका रहे यह भाव रख, विश्राम कथा को दे रहा।।
यह कथा है श्री अग्र की, जो मातु लक्ष्मी भक्त था।
सूर्यवंशी धनद धनपति, वैश्य कुल का रक्त था।।
भूप था नृपराज था वह, अधिपति अधिराज था।
गण अठारह क्षेत्र तक ,फैला हुआ गणराज्य था।।
किन्तु जन जन का हितेषी, मात्र न्यासी बन जिया।
सकल ऐश्वर्यो के रहते वह, बन के सन्यासी जिया।।
इस जगत की भोग लिप्सा, से रखे वह छेह था।
देह तन सब धारे हुए वह, सत्य में ही विदेह था।।
विश्व को समाज को था, शुभ सूत्र ममता का दिया।
हैं सकल जन जन बराबर, मन्त्र समता का दिया।।
भेद बन्धन तोड़ कर सब, एक माला में पिरोया।
न कोई ऊंचा न नीचा, भाव सम सब में संजोया।।
साथ मिल लड़ना सभी को, इस कठिन जीवन समर में।
धैर्य धनु स्कन्ध साधो, स्नेह शर तूणीर कर में।।
प्रेम के दृढ़ पाश कस लें, श्रृंखला बद्ध हो बढ़ें हम।
मिल गले इक दूसरे के, थाम लें कर तब बढ़ें हम।।
हैं सभी सन्तान हम सब, एक ही परमात्मा की।
अंश सब में एक प्रभु का, एक लय जीवात्मा की।।
फिर मनों में मैल रख कर, क्यों किसी से भेद पालें।
हैं सभी परिजन सभी के, क्यों न दिल से दिल मिला लें।।

एकता का शंख फूंका, एक रसता उर जगाई।
तोड़ कर अलगाव जन मन, में सरस सरिता बहाई।।

फिर जगा विश्वास सब में, कटिबद्ध सारे जन हुए तो।
खुल गये सब पट प्रगति के, एक जुट सब मन हुए तो।।

जन जन के मन में हुआ, आशा का संचार।
जाग उठा विश्वास फिर, उर में पनपा प्यार।।
मिटे सभी अलगाव तो, जाग उठा भ्रातृत्व।
मानव मानव से मिले, हृदय बढ़ा अपनत्व।।

एक मुद्रा ईट सबको, भेंट देने की अभिनव प्रथा।
सूत्र समरसता के आगे, आप मिट जाती व्यथा।।
आज जिसको हम कहें नव, समाजवादी अवस्था।
वह हमारे अग्र युग की ही, थी पुरातन व्यवस्था।।
यज्ञ में पशु वध न होवे, पाप है यह अभय आदेश दे।
लोक हित अभिनव किया था, यह सदय सन्देश दे।।
वह त्रेता का ट्रस्टी था, वह समाजवाद का सृष्टा था।
वह जन जन का जन नायक, वह युग नायक युगदृष्टा था।।
उस महापुरुष की पावन गाथा, कह मैं मधुप निहाल हुआ।
जिसके कारण सर्व जनों का, मान बहुत उस काल हुआ।।
महामनुज उस की कथा, मैंने मन से है कही।
लोक का कल्याण हो, उद्देश्य केवल है यही।।
उसकी करुणा के ऋणि, हर जीव सृष्टि औ मही।
वह करुणा अवतार, जगत का ट्रस्टी कहना है सही।।
अग्र का जीवन चरित मनु, लक्ष्य का प्रतिमान हो।
तो राष्ट्र क्या समाज क्या ,सब विश्व का कल्याण हो।।
यह कथा ऋषि तोग ने थी, प्रथम हरिश्चन्द्र से कही।
ऋषि द्वेष से जिसने गंवाई, सुत सुदारा और मही।।[1]
यह कथा सुन हरिश्चन्द्र ने, मां का यह तप व्रत किया।
भगवती मां की कृपा से फिर, उसने सबको पा लिया।।

फिर कथा श्री कृष्ण ने यह, पाण्डवों से भी थी कही।
हो कर प्रताड़ित बन्धुओं से, खो चुके थे जो मही।।[2]
वे भी लाभान्वित हुए शृद्धा से, जब मां का व्रत किया।
सम्मान से उनको बुला कर, धृतराष्ट्र ने फिर पद दिया।।
फिर कथा यह सूत जी ने, शौनकादि ऋषि से कही।[3]
सब ऋषि मुनि वृन्द जन ने, हृदय से उसको गही।।
मां की पूजा से सकल, होते सफल सब कार्य हैं।
मां तो ममतावान है सब, लोक की उपकार्य है।।
मां कृपालू है बड़ी फलदायिनी, है तोषिणी है पोषिणी।
वह हमें रखवालती है पालती है, हम उसी के हैं ऋणी।।
अग्र की सन्तान हैं हम, इसका हमें अति गर्व है।
उनकी स्मृतियों से जुड़ा, यह दिवस अपना पर्व है।।
आज आश्विन शुक्ल प्रथमा, अग्र वंशोदय दिवस है।
अग्र की ले आन उर में ,अग्र पथ पर बढ़ना अवस है।।
इस दिन प्रतिज्ञा लें सभी हम, साक्ष्य उनको मान कर।
मन वचन अरु कर्म से हम, चलें उनके बताए मार्ग पर।।
अग्रवालों का यही अब बस ,एक ही आदर्श हो कर्तव्य हो।
जाति कुल और राष्ट्र अपना, सब विश्व भर में भव्य हो।।

अग्र आपके पुत्र हम, आगे रहे सदेव।
नित नित आगे ही रहें, यही हमारी टैव।।
मां की किरपा पूर्ग है, गुरु का आशीर्वाद।
संग प्रेरणा आपकी, नहीं तनिक अपवाद।।
बढ़े बढ़े हैं बढ़ रहे, सदा बढ़ेंगे और।
निज समाज औ राष्ट्र को, रखें विश्व सिरमौर।।
मातु कृपा से हो गया, सकल मनोरथ पूर्ण।
अग्र वंश कर्तार की, कथा हुई सम्पूर्ण।।
आश्विन शुक्ला प्रतिपदा, दिवस शनिश्चर वार।
सम्वत छाछठ दो सहस, अग्रों का त्यौहार।।
पावन दिन यह जयन्ती, घर घर अग्र प्रसन्न।
अति पुनीत इस पर्व पर, कथा हुई सम्पन्न।।

हे अग्रजन सब आप हैं, बुद्धिमान विद्वान।
इस गाथा के मर्म को, समझेंगे श्रीमान।।
ग्रन्थ समर्पित आपको, करता आशा पाल।
मान सहित इसको सदा, रखेंगे सम्हाल।।

....

1. महा लक्ष्मी व्रत कथा
ऋषिना सहदैसेन षड् उर्मिरहितेन च
तोगस्य उवाचेदं हरिश्चन्द्रंमहीपतिम्।।113
2. महालक्ष्मी व्रत कथा
आदिस्य श्रीव्रतं कृष्ण अनुज्ञाप्य च पाण्डवान्
जगामरथमारूढ़ो माधवः स्वकुशस्थलीम्।। 120
3. महालक्ष्मी व्रत कथा
ततः किम करोत् राजा सूत ब्रूहि तपोनिधे।। 121

इति शुभम् 'अंशावतार आदि अग्र' शुभ दिवस शुभ अवसरे श्री अग्रसेन जयन्ती महोत्सव, आश्विन शुक्ला प्रतिपदा सम्वत् विक्रमी 2066 शनिवार, दिनांक 19 सितम्बर 2009 ई. श्री बाड़मेर नगरे।

जन्मांगमिदम्

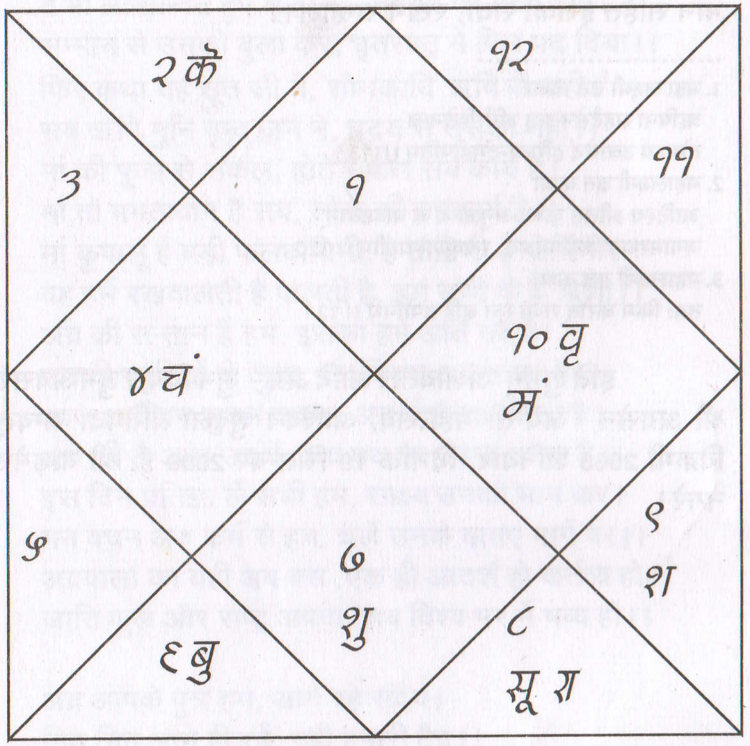

श्री अग्र की जन्म कुण्डली

अथात्र... प्रथम चरणे वृश्चिकार्कवदि पंचम्यां मार्गशीर्षमासे शनिवारेष्ट 23/38 तिष्य भे अत्र क्षणो मेष लग्नो दये .0.15.4.38

उपरोक्त कुण्डली एवं पुस्तक के प्रारम्भ में दिया गया श्री अग्र का चित्र वैद्य श्री कृपाराम अग्रवाल की पैत्रिक सम्पत्ति है जो उन्होंने अपनी पुस्तक 'अग्रसैन और अग्रवाल' में प्रकाशित की है। इस कुण्डली में दी गई जन्म तिथि महाराज अग्र की जन्मतिथि से मेल खाती है। कुण्डली के ऊपर नाम भी 'श्री अग्र की जन्म कुण्डली' लिखा है।

अपने इतिहास को जानने के लिए पढ़िए

अग्रवंशकर्तार का युग

(इतिहास शोध)

ओम प्रकाश गर्ग 'मधुप'

अग्रवालों के इतिहास की प्रामाणिक जानकारी

मूल्य 250 /-

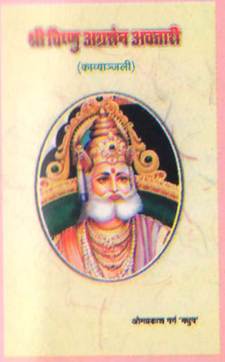

श्री विष्णु अग्रसेन अवतारी

(काव्य)

ओम प्रकाश गर्ग 'मधुप'

अग्र संस्कृति प्रचारक एवं विस्तारक
महाराजा अग्रसेन का काव्यमय जीवन चरित्र

मूल्य 125/-

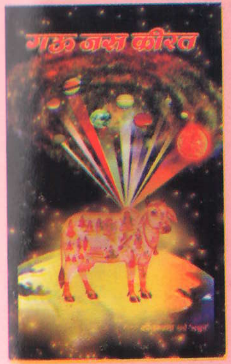

गऊ जस कीरत

(राजस्थानी काव्य)

ओम प्रकाश गर्ग 'मधुप'

गौमाता के बारे में काव्यमय सांस्कृतिक
एवं वैज्ञानिक जानकारी

मूल्य 100/-

:: पुस्तक प्राप्ति स्थल ::

बाबाजी पैकर्स
8/173 चौपासनी हाऊसिंग बोर्ड
जोधपुर (राज.)
मो. : 9414128908

बाबाजी स्क्रीन प्रिण्टर्स
हाईस्कूल रोड़, बाड़मेर (राज.)
मो.: 9461491868
9414438797

बंसल
ऐरण
कंसल
भंदल
तिंगल
मंगल
बिंदल
धारण
मधुकुल
तायल
नागल
कुच्छल
गोयल
गर्ग
गोयन
मित्तल
जिंदल
सिंघल